हि.३०२
S२०
CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैनिदण्डनम्

8.5

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

९८०

॥ श्रीमते रामानुजायनमः ॥

जैनिदण्डनम्

टोड़र मल जैनी कृत मोक्ष मार्ग प्रकाशक का खण्डन

श्रीमद्वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्योभय वेदान्तप्रवर्तकाचार्याणाम्, श्रीलक्ष्मणारामसिंहासनाधीश्वराणाम्, श्री १००८ श्रीरीवाँराज गुरुस्वामिनांशिष्यैः जशोराज्यान्तर्गतमकुराग्राम निवासभिः श्रीपण्डितभागवताचार्य्यशास्त्रिभिः विरचितम् ।

प्रकाशक

पं० रामकृपालु जी (राघव प्रपन्न)

रीछुल ग्राम, जशोराज्य

मू० ।)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुद्रक—
नागरी प्रेस, दारागंज,
प्रयाग।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'श्रीहरिः शरणम्'

'प्राङ्निवेदनम्'

आप सब महानुभावों को यह विदित ही है कि इस समय भारतवर्ष को चारों ओर से सङ्कटा दशा है—ऐसे भीषण समय में सब भारतवासियों को नित्य भगवान् से भारत को सङ्कटा दशा से मुक्त होने के लिये प्रार्थना करना उचित था। परन्तु जैनी महाशयों को यही पारस्परिक कलह सूझी। इनको यदि सनातनीय सिद्धान्तों में सन्देह था तो शान्ति पूर्वक विद्वद्परिषद् वाराणसी में सन्देहों को दूर कर लेते। कागज के घोड़े दौड़ाने की कोई आवश्यकता न थी। अभी भी हम यही कहेंगे—कि तुम विद्वानों के समक्ष आकर अपने सन्देहों को दूर कर शांति स्थापना करो तभी तो जैनी हो अन्यथा नहीं।"

सूचना

टोड़र मल्ल जैनी महोदय की हिन्दी ऐसी है कि जिसको सर्वसाधारण नहीं समझ सकते दूसरे प्रान्त की भाषा भी है हिन्दी को उन्होंने कन्था ही कर डाला है। पूर्व पक्ष करने लायक नहीं थी। इसलिये शास्त्री जी ने टोड़र मल्ल जी के भाव सूक्ष्म प्रकार से कह कर उनका उत्तर दिया है। दो एक जगह पर मल्ल जी का वाक्य आनुपूर्वी दिया भी गया है। दूसरे संस्करण में सिंहावलोकन न्याय से बचे खुचे मोक्षमा० प्र० के विषय पर विचार करते हुये दूसरे ग्रंथों के ऊपर शास्त्री जी विचार करेंगे।"

भवदीय—रामकृपालु शर्मा (राघव प्रपन्न) रीछुल राज्यजशो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भूमिका

ऐ माननीय ? सनातनधर्मी सज्जनो ? आप से सादर निवेदन है, कि टोडर मल्ल जैनी ने मोक्ष प्रकाशक पुस्तक बनाया है जिसके पञ्चम षष्ठ अधिकार में ईश्वर-के-अवतार-रामकृष्णादि का व यज्ञों का खण्डन करते हुये सनातनधर्म के अवान्तरीय श्री रामानुज शाँकरादि सिद्धान्तों का खंडन किया है, पुस्तक कई वर्षों की छपी हुई है किसी भी सनातनधर्मी विद्वान् के सामने नहीं आई जैनियों ने जहाँ तक हो सका है पुस्तक को छिपाया। अदालत में भी शास्त्रार्थ की अवधि को टालकर चुप हो गये।

भगवत्कृपा से हमको पुस्तक मिल गई यद्यपि विवाद जीव रक्षा दर्पण पुस्तक में हुआ था। तथापि मोक्षमार्ग प्रकाशक के खंडन से जीव रक्षा दर्पण जैन धर्म इन दो पुस्तकों का खंडन स्वतः सिद्ध है। जीवरक्षा दर्पण के आरम्भ में ही (प्रथमग्रासे मक्षिकापातः) इस न्याय से वेद गीता धर्म शास्त्रादि के वचनों को जैन मिथ्यार्थवाद कसौटी में कसने वाले ग्रन्थ कर्ता की पोल खुल गई। इस पुस्तक में जीवरक्षा के बहाने जीवों का भक्षण किया गया है। हमने यज्ञों में वेद सिद्धान्त अहिंसा का ही मण्डन कर जैनियों की मिथ्या अहिंसा का खंडन किया है।

श्री १००८ श्री रीवां राजगुरु लक्ष्मणारामसिंहासनाधीश्वर श्री स्वामी जी महाराज के मङ्गलानुशासन द्वारा काशी में वैयाकरण केसरी पं० हरिनारायण तिवारी जी से न्यायव्याकरणादि शास्त्रों के जो दो चार अक्षर प्राप्त हैं। उनसे सनातन धर्म की सेवा का सौभाग्य उत्तम प्राप्त हुआ है। हमारे गुरुवर्य्य पं० राजराजेश्वर शास्त्री, पं० आचार्य्यवर देवनायकाचार्य्य इत्यादि हजारो विद्वान्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सार्वभौम काशी में वर्तमान हैं। जिनके सन्मुख शास्त्रार्थ में कभी जैनी नहीं आसकते, यहाँ पर काशीय विद्वानों के शिष्य ही जैनियो के किये हुये आक्षेपों का उत्तर देने का समर्थ हैं। हम उनका आशीर्वाद ही चाहते हैं। इस विवाद में दोष जैनियों को ही है। पाठकों को पुस्तक देखन से मालूम हो जायगा हमने आक्षेपों का उत्तर मात्र दिया है।

यह पुस्तक राज्य जशो रीछुन ग्राम निवासी चान्द्रिक पं० रामकृपालु जी की प्रेरणा से बनाई गई है। ये शाँत भगवत् भागवत कैंकर्यपरायण एवं सत्यप्रिय हैं, जैनि दण्डन पुस्तक की छपाई का सम्पूर्ण भार आपही ने लिया है। इसलिये आप धन्यवाद के पात्र हैं। भगवान् आपको चिरञ्जीवी बनावें :—

जिनेनप्रोक्तं जैनं मतम् तदस्ति एषामिति जैनिनः तेषां
दण्डन मिति जैनि दण्डनम्'

पं० टोड़र मल्ल जी ने सनातन धर्म के विषय में बहुत अपशब्दों का प्रयोग किया है उन्हीं अपशब्द श्रवणजन्य वेदना के आवेश में उत्तर देते समय हमारे मुख से भी कहीं २ कटु शब्द निकले हैं। यद्यपि हमारे योग्य शब्द वह नहीं हैं तथापि टोड़र मल्ल जैनी के अपशब्दों का उत्तर उसी प्रकार से ठीक दिया गया है—पुस्तक लेख सम्बन्धी कार्य हमारे सामने पहले ही आया है। इसलिये जो कुछ त्रुटियां भई हों उनको हमारे गुरुवर्य्य विद्वज्जन सुधार लेंगे। क्योकि कहा भी है कि:—

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समा दधति साधवः॥

विदुषामनुचरः—भागवताचार्य शास्त्री

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय सूची

मङ्गलाचरण ।
जैनियों की उत्पत्ति ।
अद्वैती के गृहीतमिथ्यात्वादि के खंडन का खंडन ।
साक्षात् परम्परया मोक्षप्रद वैदिक अनेक मार्गोंके विरोधका परिहार
भगवान् की कीर्तनादि भक्ति में महाशक्ति ।
ब्रह्मादि के सृष्टि कर्तृत्वादि के निराकरण का खंडन ।
अवतार मीमांसा का खंडन व ईश्वर का तर्कावतार ।
वैदिक यज्ञों में हिंसा का उद्देश्य ।
रासलीला व चीरहरण के दोषों का निराकरण ।
भगवान् रामचन्द्रजी महाराज के विषय में दोषों का निराकरण ।
सतीधर्म के निराकरण का खंडन ।
ईश्वरीय जेल के निराकरण का खंडन ।
निर्गुण सगुण भक्ति की मीमांसा के निराकरण का खंडन ।
सांख्य शास्त्र के निराकरण का खंडन ।
न्यायशास्त्र के निराकरण का खंडन ।
वैशेषिक मत के निराकरण का खंडन ।
मीमांसा शास्त्र के निराकरण का खंडन ।
जैनियोंकी वीतरागता व भक्तियोगमें मल्लकी अज्ञानताका निराकरण
शङ्कर जी के लिंग की शङ्का का निराकरण ।
मोहनी रूप दर्शन में शङ्कर जी का उद्देश्य ।
हिन्दुसनातन धर्म विश्वधर्म व जगद्गुरु है ।
वेदों में आये हुये अर्हन् शब्द से जैनियों की प्राचीनता का खंडन ।
शास्त्र में आये हुये जिन शब्द से मल्ल की माया का प्रकाश ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

|| ॐनमो भगवते हयग्रीवाय ||

❀ श्रीमते रामानुजाय नमः ❀

* जैनिदण्डनम् *

अर्थात् "मोक्ष मार्ग प्रकाशक" का खण्डन

अथ मंगलाचरणम्

स्वपदाम्बुजसंसृतपापहरं, सकलश्रुतिसारयथार्थ करम् ।
जैनादिविनाशनदण्डधरं, प्रणमामि यतीश्वरमादि गुरुम् ॥१॥
मारीच वेषोऽन्वकरोत् कुबुद्धिर्निकृष्टजातीय भवश्च हिन्दून् ।
व्यामोहयन् टोड़रमल्ल जैनी रसा तलँस्तान् खलु नेतु कामः।२।
प्रभावं वेदधर्माणां महतां न विवेद यः ।
विमोहयन् यतस्तान् स स्वयमेव विमोहितः ॥३॥
श्रीसम्प्रदायाब्धिहिमद्युतीनां, श्रीलक्ष्मणारामसुनीश्वराणाम् ।
आरुह्य सिंहे सुवरासने यैः, संरक्षितो वैष्णव वेदधर्मः ॥४॥
एवं श्रीस्वामिनां शिष्यो, नत्वा तच्चरणाम्बुजम् ।
शास्त्री भागवताचार्य्यः, कृतवान् जैनिदण्डनम् ॥५॥

कलियुग में जैनमत कहाँ से किस प्रकार चला ? इसका भविष्य इतिहास "शिवपुराण रुद्रसंहिता" अध्याय ४ से १२ पर्यन्त इस प्रकार है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वकाल में तारकासुर दैत्य बड़ा प्रतापवी उपद्रवी था। जिसे शिवपुत्र स्कन्द ने लोक रक्षा के लिये समर भूमि में मारा था। उसी तारकासुर के तीन पुत्र थे, तारकाक्ष, विद्युन्माली, कमलाक्ष। ये तीनों भाई कठिन तपस्या कर ब्रह्मा जी को प्रसन्न कर तीन पुर वरदान में लिये। तारकाक्ष सम्पूर्ण युद्ध सामग्रियों से सुसज्जित परम सुन्दर सर्वभोग सम्पन्न अभेद्य सोने का किला लिया। इसी प्रकार लोहे का किला विद्युन्माली, चाँदी का किला कमलाक्ष ने लिया। ब्रह्माजी ने चलते समय उनसे सनातन धर्म की कारण रूपा शङ्कर जी की उपासना का उपदेश करते हुये कहा, कि जब तक तीनों पुर भिन्न २ रहेंगे और उक्त धर्म बना रहेगा तब तक तुम सर्वथा अमर रहोगे अन्यथा नहीं।

अब ये लोग असंख्य आत्मीय दैत्यों को उन्हीं विमान रूप तीनों पुरों में आश्रय दे आनन्द से रहने लगे। इस वरदान के बल से तथा धर्म के प्रताप से वे अजेय हो गये। अब पूर्वजों का बदला लेने के लिये देवताओं पर चढ़ाई करके नाकों दम कर दिया। सब देवता स्थान च्युत हो गये, और संकट में पड़े, व्याकुल हो शङ्कर जी के पास जाकर सब दुःख सुनाया। शिव जी ने कहा, वे त्रिपुराधीश मेरे भक्त हैं मैं कुछ नहीं कर सक्ता। क्योंकि धर्मात्मा का कोई कुछ नहीं कर सकता। मेरी भक्ति के साथ जो वह अधर्म कर रहे हैं, उसका दण्ड विष्णु भगवान् देंगे। उनके पास जाओ तुम्हारा काम सिद्ध होगा। अब ब्रह्मा जी को भी साथ में लिये सब देवता विष्णु के पास जा चरणों में गिर दुःख सुनाया। धर्म मूलक त्रिपुर के वध में विष्णु ने अच्छी तरह से विचार किया। विचार करते ही, अपनी माया से एक पुरुष पैदा किया। उसका स्वरूप इस प्रकार है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शिवपुराण पृष्ठ ४०१, ४०२

मुण्डिनं म्लानवस्त्रञ्च गुंफिपात्र समन्वितम् ॥
दधानं पुञ्जिकां हस्ते चालयन्तं पदे पदे ॥१॥
वस्त्रयुक्तं तथा हस्तं चीयमाणं मुखे सदा ॥
धर्मेति व्याहरन्तं हि वाचा विक्लवया मुनिम् ॥२॥

अर्थ

मुड़िया मैले वस्त्र पहिने हाथ में लकड़ी का पात्र व कूंच को लिये हुये दूसरे हाथ में वस्त्र लिये मुख में लपेटे हुये मुनि विकल वाणी से निरन्तर 'धर्म धर्म' ऐसा कहते हुये इस पुरुष ने विष्णु भगवान् से हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि हे अच्युत ? मैं क्या करूँ, मुझे क्या आज्ञा है। मेरा क्या नाम है। इस प्रकार उस पुरुष के सुन्दर नम्र वचन सुन विष्णु ने कहा कि मेरे विचार से उत्पन्न हो तुम्हारा अरिहन् जिन नाम होगा। तुम त्रिपुर में जाकर कुतर्क भरे प्रत्यक्षवाद के उपदेशों से तारकासुर के लड़कों को शिव जी की उपासना से हटाओ। अरिहन् अपनी माया से एक ग्रन्थ श्रुति स्मृति पुराण वर्णाश्रम धर्म के विरुद्ध अहिंसा शब्द से युक्त बनाया। अपने शिष्य ऋषि, यति कीर्प्य, उपाध्याय, इनको पढ़ाया। विष्णु की आज्ञा से तथा नारद मुनि की सहायता से त्रिपुर में जा अहिंसा-शब्द युक्त जैनधर्म का प्रचार किया। किन्तु लाभ न हुआ। तब विष्णु की आज्ञा से नारद मुनि ने त्रिपुराधीश के पास जा कहा।

हे दैत्यपते ? तुम्हारे यहाँ एक ऋषि विराजमान हैं। ये विश्वसनीय सिद्ध पुरुष हैं। उनकी योग्यता को देख मैं उन्हीं का शिष्य होगया हूँ। तुम बड़े जानकार हो क्यों विलम्ब करते हो,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसा सत्संग कभी कभी मिलता है। यह सुन त्रिपुराधीश ऋषि के पास आकर, दीक्षा लेने की इच्छा जाहिर की तब ऋषि ने प्रत्यक्षवाद, जैन मजहब में चलने की प्रतिज्ञा करा कर दीक्षा दी। दीक्षा ग्रहण करते ही सब त्रिपुर वासी दैत्य भी दीक्षित होगये तथा जैन मजहब को स्वीकार कर लिया। अरिहन् का उपदेश यह था—

संसार अनादि से चला आता है। इसको बनाने वाला कोई नहीं है। स्वयं प्रगट होकर नष्ट होता रहता है। ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यन्त जितने देह बन्धन हैं, वहाँ आत्मा ही ईश्वर है। दूसरा कोई ईश्वर नहीं है। देह सब की एक सी है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, यह सब देही के नाम हैं। हमारी तरह इनको भी भूख प्यास इत्यादि सांसारिक बातें होती हैं। किसी को मारना न चाहिये, यही धर्म है, पीड़ा देना पाप है। यज्ञ करने में पाप है। अन्न जलाना, जीव मारना, दक्षिणा देना इसमें पाप के सिवाय कुछ नहीं है। शरीर का परिमाण ही आत्मा है। पातिव्रत धर्म कोई वस्तु नहीं है। श्राद्ध तर्पण मिथ्या है।

ऐसे उपदेशों से दैत्यों के मन से सनातन धर्म को हटा दिया। अब क्या था, पातिव्रत धर्म छूटा, स्त्रियों के प्रथम समागम की भरमार मन्दिरों में होने लगी। वीरता छूटी अहिंसा आई, शिव भक्ति छूटी, मोहन आकर्षण होने लगे, इस तरह जैन मत के आवेश में हो दुराचारी त्रिपुर के दैत्यों ने सनातन धर्म का खण्डन जैनमत का समर्थन कर आचरण में प्रवृत्त होगये। ब्रह्मा के वरदान का अन्त होगया। शिव जी ने धनुष उठाय एक ही बाण मार कर दैत्यों सहित सोने चाँदी लोहे के तीनों पुर भस्म कर दिया। त्रिपुर दाह के बाद इस लोकोपकारिणी धर्म निन्दा से उत्पन्न पाप के भय से व्याकुल हो चार शिष्यों के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहित "अरिहन्" त्राहि २ कर विष्णु के चरणों में गिर पड़ा और बोला।

हे सर्वांतर्यामिन् ? जगत् कर्त्ता आपकी आज्ञा से मैं वर्णाश्रम धर्म वेद शास्त्र पुराण की निन्दा कर घोर पाप किया हूँ। मेरी क्या गति होगी ? क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, विष्णु ने कहा कि हे अरिहन् ! जैनाचार्य्य, मत डरो तुम्हारे पापों का प्रायश्चित्त बतलाता हूँ। तुम नरक को न जाओगे, अब तुम लोग मरुस्थली में जा कर कालक्षेप करो। जब कलियुग आयेगा तब तुम कर्मभूमि की तरफ फेरी करना। तब मनुष्य तुम्हारे सिद्धान्त तथा उससे उत्पन्न पाप को आनन्द के साथ स्वीकार करके नरक के भागी बनेंगे। इससे तुम्हारे पापों का प्रायश्चित्त हो जायगा। इस आज्ञा को पाकर मरुस्थली (कोंक, वेंक, कलिङ्ग, कर्नाटक) आदि देशों में अरिहन् ने कालक्षेप करते हुये वहाँ वास किया। इससे कुछ दिन पहिले महाराज ऋषभदेव, मनु के सन्ती ने नीति पूर्वक राज्य करते हुये, भगवत भक्ति मार्ग का पूर्ण तया पालन किया, सौ लड़कों में श्रेष्ठ जेष्ठ पुत्र भरत जी को राज्य दे कर आप परमहंस वृत्ति को धारण करते हुये परब्रह्म नारायण की सौन्दर्य्य युक्त सच्चिदानन्द मूर्ति का आत्मरूपी मन्दिर में अखण्ड ध्यान करते हुये, जंगल में विचरने लगे। भोजन वस्त्र सोना, जागना, चलना, फिरना, मलमूत्र त्याग इत्यादि का नियम न था। क्योंकि परमहंस आश्रम जीवन् मुक्त होता हुआ वेद के विधि निषेध से भी मुक्त है। इसी तरह इनका आचरण था। उसी समय बाँसों के संघर्ष से जंगल में आग लगी उसी दावानल में लकड़ी की तरह ऋषभदेव का पाञ्चभौतिक शरीर जल गया। और आप परम पद वैकुण्ठ में सायुज्य मुक्ति को प्राप्त हुये। जिनकी प्रशंसा बड़े २ महर्षि देवता भी करने लगे ऋषभदेव के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवन् मुक्त आचरण को देख वहाँ की प्रजा ने भगवत् भक्ति में परमहंस धर्म को छोड़ कर ऊपरी शौचाचार रहित अहिंसा जड़-वाद को ग्रहण किया। इसी समय भगवान् विष्णु से भेजे हुये अरिहन् राजा वहाँ की प्रजा से ऋषभदेव की बड़ाई का कारण जड़चर्य्या को अपना प्रायश्चित्त करने के लिये वहाँ की प्रजा में इस मत का उपदेश दिया। जिसका इतिहास इस प्रकार है—
(श्री मद्भागवत के स्कन्द ५ अध्याय ६ श्लो० १०—११)

येन हवाव कलौ मनुजापसदा, देवमायाविमोहिताः स्वविधिनियोगशौचाचारविहीना देवहेलनान्ययव्रतानि निजनिजेच्छया गृह्लानाः। अस्नानाचमना शौचकेशोल्लुँचनादीनि कलिनाऽ धर्म वहुलेनोपहतधियो ब्रह्मब्राह्मणयज्ञपुरुषलोकविदूपकाः प्रायेण भविष्यन्ति ॥ १० ॥

ते च ह्यर्वाक्तनया निजलोकयात्रयान्धपरम्परयाश्वस्ताँस्तमस्यन्धे स्वयमेव प्रपतिष्यान्ति ॥ ११ ॥

अर्थ

जो इस जड़चर्यावाद को प्रवर्तन करेंगे वह इस जैन मत से कलियुग में तुच्छ मनुष्य देवमाया से मोहित हो, अपने मन मुखी विधि योग से शौच आचार हीन विष्णु की निन्दा करने वाले व्रत केश लुञ्चन इत्यादि,, अपनी अपनी इच्छा से ग्रहण कर स्नान आचमन शौच न करेंगे। केशों को नोंच नोंच के उखारेंगे, अधर्म से पूर्ण कलियुग के प्रभाव से बुद्धि नष्ट होते हुये ब्रह्म वेद ब्राह्मण और यज्ञ पुरुष भगवान् की निन्दा करने वाले होवेंगे। ये लोग अन्धपरम्परा के तुल्य वेदविरुद्ध अपनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छा अनुसार प्रवृत्ति में विश्वास करने वाले स्वयं ही घोर अन्धतम नरक में गिरेंगे। ऐसे भागवत में कहे हुये ऋषभदेव के ऊपरी पूर्वोक्त रूप व्रत अरिहन् ने नास्तिक मत को चलाकर निज पापों की प्रसादी जिनको बाँट दिया वही जैनमत के अनुयायी होकर जैनी कहाये।

यह जैनमत की उत्पत्ति का संक्षेप से सम्वाद कहा गया। जैनमत बौद्धमत की शाखा है यह भी शिव पुराण में लिखा है।

श्लोक

नमस्ते गूढ़देहाय वेदनिन्दाकरायच ॥
योगाचार्य्याय जैनाय बौद्धरूपाय मा पते !"

इस श्लोक में दैत्यों के मोहन करने के लिये माया से आच्छादित शरीर वाले वेद निन्दा करने वाले बौद्धरूप जिनके लिये देवता लोग नमस्कार करते हैं। इससे जैनमत नास्तिक व बौद्धमत की शाखा सिद्ध होता है।

श्री मद्भागवंत में विष्णु भगवान् के ऋषभावतार से जैनियों की उत्पत्ति का भण्डाफोड़।

जिस विष्णु के अवतार ऋषभदेव जी को तुम भागवत के प्रमाण से प्रथम तीर्थंकर सावित करते हो, उसी भागवत के प्रमाण से पहिले कहे हुये प्रकार से कलियुग में अढ़ाई हज़ार वर्ष से जैनमत का चलना सिद्ध है। जिनको देखना हो वह भागवत के पंचम स्कंध के ६ अ० को देखले., जैनियों को अवश्य देखना चाहिये जिससे उनकी उछल कूँद का खातमाखतम हो जाय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पद्वाक्यप्रमाणपारावारीणपण्डितसार्वभौम-रामानुजसत्संप्रदायाचार्य्यश्री १०८ श्रीस्वामी राममिश्रशास्त्री प्रोफेसर गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज बनारस के भाषण में डोंगरे जैनो की नुक्ताचीनी की समालोचना ।

जो कि जैन धर्म नामक ग्रन्थ में पृष्ठ ११०-१११ में लिखा है कि बड़े बड़े नामी आचार्य्यों ने अपने ग्रन्थों में जैन मत का खण्डन किया है। यह लिख कर यह भी लिखते हैं कि राममिश्र शास्त्री जी ने बनारस के भाषण में जैन मत की प्रशंसा की थी। सो यह सर्वथा गलत है, डोंगरे ने महामहोपाध्याय रामानुज सम्प्रदायाचार्य्य राममिश्र शास्त्री जी के ग्रन्थों को नहीं देखा। शास्त्री जी ने खुले शब्दों से ६ नास्तिकों में जैनियों को बतलाया है। सम्वत् १९६२ पौष शुक्ला १ को शास्त्री जी का व्याख्यान अवश्य हुआ था परन्तु जैनियों की कोई चर्चा न थी। ज्ञान, वैराग्य, शम, दम, अक्रोध इत्यादि गुण सनातन धर्म के बतलाये गये थे। परन्तु वाहरे डोंगरे, क्या झूँठ बोलना ही जैन धर्म है इसी प्रकार असत्य भाषण डोंगरे जी का हम आगे वेद मंत्रों के विचार में बतलावेंगे। जिससे पाठकों को डोंगरे की माया का पता चल जायगा। मोक्ष मार्ग प्रकाशक के पृ० १४० में

अद्वैती के गृहीतमिथ्यात्व के खण्डन का खण्डन व ब्रह्मवादी के सर्वव्यापकत्व का व ज्ञान योग से मुक्ति मानने के सिद्धान्त का मण्डन ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैं एक सुरक्षित स्थान में बने हुये सुसज्जित महल के बढ़िया कमरे में पड़ा हुवा शयन करते समय बड़ी २ लड़ाइयाँ तथा शास्त्रार्थ पुस्तकालय को प्रत्यक्ष देखा। उस समय मुझे स्वप्न के संसार की सत्यता में इतना अधिक विश्वास था, कि इसके सिवाय कहीं कुछ भी नहीं है। न सुरक्षित स्थान है न सुसज्जित महल है, न बढ़िया कमरा, व सुख पूर्वक सोना भी नहीं है। है क्या सब खुला मैदान, भूभाग, आकाश, मण्डल, ग्रहगण दौड़ना, भागना, क्षण २ में दुखी सुखी होना, नाना प्रपञ्च सत्य मौजूद है। इधर बहुत देर सोने से न जाने किस कारण शरीर में पसीना आ गया, कपड़े गीले हो गये, उसकी ठंडक से मैं जाग पड़ा। जिन २ चीजों को मैं सत्य माने था बड़े परिश्रम से सञ्चित कर तिजोरियों में रक्खा था, अब उनका नाम निशान तक नहीं है। न युद्ध है न खुला मैदान है इत्यादि, सिर्फ विचारने से मालूम होता था कि मैंने आज बहुत अच्छा स्वप्न देखा; जो जो चीजें स्वप्न में दिखाई देती थीं। वह सब मेरे संकल्प से उत्पन्न थीं मेरे ही शरीर के अन्दर किसी भाग में मौजूद थीं। मैं यह सिनेमा देखने के लिये किसी शहर में गया था, एक पैसा भी खर्च न हुवा, उधर की सब सामग्रियाँ जैसे मेज कुर्सी सूर्य्य चन्द्रमा हवाई इत्यादि के कण कण में मैं ही था, दूसरा वहाँ कोई नहीं था। यहाँ का मैं भी मेरा ही स्वरूप था। गुरु शिष्य, राजा रङ्क, स्वर्ग नरक सब मेरा ही स्वरूप था। ऐ जैनियो, तुम्हारी बहस गलत है कि तुम स्वप्न के मैं को देख ऐसी दलीलें पेश करते हो कि मानों चार अंगुल के हृदय में बम्बई बसाये हो। जब स्वप्न के ही संसार को अपना असली निवास समझते हो, तो अच्छा करते हो, लेकिन अब बम्बई जाने का कोई काम नहीं है। जिस तरह स्वप्न के संसार में मेरे सिवाय और कुछ भी नहीं था, उसी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकार इस संसार में भी मेरे रूप के सिवाय और कुछ नहीं है जैसे स्वप्न में आत्मा की परिस्थिती लिङ्ग शरीर में रहती है। उसी तरह विराट् ब्रह्म के लिङ्ग शरीर में संसार की परिस्थिती रहती। जैसे स्वप्न का संसार सीमित होने पर भी वृहद् रूप दिखाई पड़ता है; इसी तरह यह संसार भी सीमित होने पर भी अज्ञानियों को सर्वस्वरूप दिखाई पड़ता है। जब स्वप्नावस्था के सब सङ्कल्प जागृत में समा जाते हैं, तब एक निर्विकल्पक अपना ही स्वरूप शेष रह जाता है। इसी तरह जब जागृत के सब सङ्कल्पों का समावेश ब्रह्म में हो जाता है, तब ब्रह्म के सिवाय कुछ भी नहीं रह जाता, यही अद्वैतियों का मोक्ष है। जिसके टोड़रमल्ल ने कई भेद अपनी कल्पना से कहा है। तुम तो साध्यावस्था सिद्धावस्था को एक समझकर कहते हो कि यदि जागना सत्य है, तो सोया कैसे अगर सोना सत्य है, तो जागेगा कैसे तुम ज्ञान योग की फलरूप सिद्धावस्था को एक तरफ और साधन करनेवालों को दूसरी तरफ रखकर एक तराजू में तौलते हो, साधन करनेवाले अद्वैती क्या तुमसे कभी जीव को शुद्ध ब्रह्म कहा है, या अद्वैतियों के किसी भी ग्रन्थ में पाया है, कि इस साधनावस्था में अपने को शुद्ध ब्रह्म कहे हों, यह तुम्हारी कपोल कल्पना है। सोऽहम्" यह अनुभव का विषय है। कहने का विषय नहीं है। जब तक कहने की ताकत है। तब तक सोऽहं नहीं। जैसे कोई कहे कि स्वप्न में मैंने खटिया में पड़े हुये मैं के साथ शास्त्रार्थ किया तो स्वप्न का मैं जीत गया दूसरा मैं हार गया ऐसा कहने वाले को जागा हुआ कोई नहीं कह सकता, कोई जेली आदमी उसी जेली आदमी से जेल में कहता है, कि मैं मथुरा का मथुरिया चौबे हूँ। इस समय अपराध करने से जेली बना हुआ हूँ। सजा पूरी होने पर चौबे होकर मथुरा चला जाऊँगा अब मल्ल विचारें, कि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जेल अवस्था में अपने निरपराध मथुरिया चौबे का स्वरूप क्यों स्मरण हो रहा है। यदि निरपराध शुद्ध चौबे है, तो जेली कैसे यदि जेली है तो शुद्ध चोबे कैसे, शुद्ध चौबे को जेल से छूटने का उपाय करना ही मिथ्या है। ऐसे उन्मत्त की तरह ब्रह्म के विषय में टोड़रमल्ल की मूर्खता सूचक अनेक वाक्य हैं जो अद्वैत वेदान्त से सम्बन्ध नहीं रखते। (जैसे जो आप शुद्ध ब्रह्म है तो मोक्ष उपाय काहे को करैं हैं) इत्यादि,

जैनियों ने ही भगवान् विष्णु की माया से उत्पन्न अरिहन् के उपदिष्ट मायारूप मिथ्या जैनमार्ग का अवलम्बन कर गृहीत-मिथ्यात्व के भागी बन गये हैं। सनातनधर्मी हिन्दू इन्द्र, लोक, पाल, हनुमान् इत्यादि देवताओं को प्रसन्न कर सबके देखते ही अभीष्ट फल को पाते हैं। हिन्दुओं में अभी ऐसे सामर्थ्य शाली हैं देवतों से जो प्रत्यक्ष बातचीत करते हैं। जैनदर्शन मिथ्या दर्शन है। जैन ज्ञान मिथ्या ज्ञान है। यह बात जैनियों की उत्पत्ति से सिद्ध है। अद्वैती ब्रह्मवादी का सर्व व्यापकत्व सत्य है" तुम्हारे चर्म के नेत्रों से अद्वैत ब्रह्म की सर्वव्यापकता कैसे दिखाय यदि आकाश सर्वव्यापक है, तो क्या ब्रह्म सर्वव्यापक न हुवा क्योंकि आकाश भी ब्रह्मस्वरूप ही है। जैसे घटाकाश मठा-काश यह महाकाश में घटादि रूप उपाधि से खण्ड की भ्रांति मात्र है। क्योंकि अचेतन के अणु २ में भी सूक्ष्म रूप से आकाश व्याप्त है। इसी प्रकार महाकाशवत् ब्रह्म भी सर्वत्र व्याप्त है। जो खण्ड प्रतीत होते हैं, उन के भीतर बाहर भी आकाश की तरह ब्रह्म की सत्ता बराबर है। कर्म बन्धन से जीव संज्ञा होती है। ज्ञान योग से घटाकाश की तरह स्वप्न से जागृत होने पर ब्रह्म स्वरूप महाकाश की तरह ब्रह्म हो जाता है। आत्मा के स्वरूप में कोई विकार नहीं होते, प्रकृति के गुण मिथ्या प्रतीत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होते हैं, जैसे जल के अनेक घट में जल के हिलने से प्रतिविम्ब रूप अनेक सूर्य चन्द्र भी हिलते हैं, और सूर्य अनेक रूप से दिखाई देते हैं; इसी तरह ब्रह्म भी एक होता हुआ अनेक रूप से दिखाई देता है। चन्द्र सूर्य्य न हिलते हैं, न अनेक हैं, इसी प्रकार ब्रह्म भी एक है। माया रूप उपाधि से जीव संज्ञक अनेक रूप प्रतीत होते हैं। टोड़रमल्ल ने भ्रम से तीन गुणों से तीन देवताओं की उत्पत्ति लिखा है। सो उनकी मनमानी कल्पना है। ईश्वर जीवों के ऊपर दया कर तीनों काम करते हैं। उसमें तीनों गुण व्याप्त नहीं होते, क्योंकि जो सच्चीदानन्द ब्रह्म है। उसमें रजोगुण तमोगुण का सम्भव कैसे तीनों गुण जीवों के दण्ड प्रसादरूप हैं, जैसे राजा अपराधियों को जो दण्ड देता है। तो क्या वह अन्यायी व तमोगुणी कहा जायगा नहीं, वह तो न्यायाधीश है। दण्ड न देने से आत्माओं के बन्धन रूप चोरी डाकूपना इत्यादि के रजोगुण तमोगुण फल कैसे छूटेंगें, काँटा ही से काँटा काढ़ा जाता है। जो काँटा लेकर काँटा निकालता है, वह काँटा रूप नहीं हो जाता, किन्तु उपकारी माना जाता है। जिसके काँटा लगा था वह यदि पीड़ाभय के कारण काँटा काढ़ने वाले को क्रूर तमोगुणी रजोगुणी कहे तो उसकी बड़ी भूल है। भगवान् जीवों के कल्याण के लिये अनेक रूप से दण्ड भय से सुमार्ग में लाकर आनन्द रूप कर देते हैं।

साक्षात् परम्परया मोक्षप्रद वैदिक अनेक मार्गों के विरोध का परिहार

कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग के साधन की प्राणायामादि विधि को जैनी महोदय ने अपने अज्ञान के ढाँचे में ढाल कर मुग्धता को प्राप्त हो अपनी बुद्धि का परिचय दिया है। मल्ल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी ने कर्मादि योग की अङ्ग रूप पवन साधन विधि को कभी देखा ही नहीं, न उन आध्यात्मिक शक्तिशाली योगियों को ही देखा, जिनके सत्य से ऐसे कलिकाल में जगत् का स्तंभन हो रहा है। जैनियों को तो केश लुञ्चन का भूत सवार रहता है। ये भक्ति-योग को क्या जानें ध्रुव प्रह्लाद इत्यादि भक्तियोगियों के प्राचीन इतिहास मौजूद हैं। जिन्होंने आत्मा को साक्षात कर ब्रह्मपद को प्राप्त हुये। सनातनधर्म में अधिकारी भेद से मोक्ष पद के लिये अनेक प्रकार के मार्ग हैं। जिसको जैनी महोदय ने न समझकर परस्पर विरोधाभास वताया है। सो जैनी महोदय की भ्रान्ति-मात्र है। क्योंकि सब की शक्ति एक सी नहीं होती। जिसकी जैसी है। उसको उसी प्रकार का सरल व कठिन मार्ग ईश्वर बतलाते हैं जैसे—किसी देश व शहर में जाने के कई मार्ग होते हैं। जो जिस मार्ग से जाना चाहे जा सकता है। ये अपनी शक्ति के आधीन है। कोई हवाई जहाज से जाता है, कोई मोटर से, कोई घोड़ा से कोई बैल गाड़ी से और कोई पैदल जाता है। पहुँ-चना सबको एक ही स्थान में है। अब रह यह गया कि कोई आगे पहुँच गया कोई पीछे पहुँचेगा, जिस प्रकार कोई हवाई जहाज मोटर घोड़ा में नहीं जा सकता जाने से गिरने की सम्भावना है। इस बात को माता पिता समझकर पुत्र से कहते हैं कि बेटा, पैदल ही चले जाओ हवाई जहाज से जाने में भय है। जहाज का मार्ग तुम्हारी शक्ति के बाहर है। दूसरे से कहते हैं कि तुम कभी भी घोड़ा में नहीं चढ़े हो, चढ़ने पर गिरकर अंग भंग हो जाओगे अब बतलाइए जो माता पिता ने लड़कों की शक्ति के अनुसार प्रथम को जिस मार्ग का उपदेश किया उसी को दूसरे के लिये भय दिखा कर दूसरे मार्ग का उपदेश देते हैं। तो क्या यह माता पिता का उपदेश परस्पर विरुद्ध माना जा सकता है। यदि नहीं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माना जा सकता तो सच्चिदानन्द भगवान् के भी अनेक प्रकार वेद सिद्धान्त अधिकारी भेद से परस्पर विरुद्ध नहीं है। ऐसे गूढ़ वेद सिद्धान्त को मल्ल ऐसे बुद्धि हीन देवानांप्रिय कैसे जान सकते हैं। अभी यह जैनी कुछ दिन सनातनीय शास्त्रों को पढ़ें तब कुछ २ पता चलेगा। भगवान् इनको सद्बुद्धि प्रदान कर सनातन धर्म में श्रद्धा उत्पन्न करें जिससे हिन्दुओं के प्रति "मम मुखे जिह्वा नास्ति" इस न्याय के अनुसार वर्ताव न करें। शुभम्।

भगवान् के नामों में महाशक्ति

मल्ल जी ने भगवन्नाम शक्ति से निष्फलता कहा है। उसका भाव यह है कि जैसे गुड़ कहने से मुख मीठा नहीं होता, नीम कहने से कड़ुवा नहीं होता है वैसे ही राम कृष्णादि नाम से पाप नहीं छूटता। मल्ल जी इस दृष्टान्त को पहाड़ के समान बुद्धि रखने वाले भले सत्य मानते हों, परन्तु सर्व ज्ञानमय वेद शास्त्र से वह चन्डूखाने की गप्प है। मल्ल जी ने नाम की शक्ति को नहीं जाना व्याकरण के सर्वोत्तम विद्वान् महर्षि पतञ्जलि ने शब्द में अनन्त शक्ति मानी है। देखने में ही आता है कि मधुर शब्द का भाषण करें, तो आदर से प्रणाम कर कुशलता पूँछेगा यदि कटु शब्द कह दें तो या तो मारेगा या गालियाँ देगा। फिर कौन कहता है कि शब्द में शक्ति नहीं है। यह हमने मान लिया कि गुड़ कहने पर मुख मीठा और नीम कहने पर कटु नहीं होता किन्तु नींबू या दही वड़ा कहने पर मुख से पानी क्यों आ जाता है। जैसे दही नीबू के उच्चारण से जीभ पानी छोड़ देती है, उसी प्रकार यदि आर्तनाद से भगवान् के नाम का उच्चारण किया जावे तो भगवान् उसको अपना लेते हैं। इस पर अनुभवी कवि लिखता है कि—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"हरि हरति पापानि दुष्ट चित्तैरपि स्मृतः ।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः ॥"

दुष्ट चित्तों से स्मरण किया भी हरिनाम पापों का ऐसा नाश कर देता है। जैसे विना इच्छा के स्पर्श की हुई अग्नि जला देती है। इसका उदाहरण वेद व्यास जी भी लिखते हैं कि—

"अग्रे कुरूणामथ पाण्डवानां दुःशासनेनाहृत वस्त्रकेशा"
सञ्चिन्त्य नामानि तदा गृणाति गोविन्द दामोदर माधवेति ॥

आकृष्यमाणे वसने द्रौपद्यास्तु विशांपते,
तद्रूपमपरं वस्त्रं प्रादुरासीदनेकशः ॥
नाना रागविरागाणि वसनान्यथ वै प्रभो !
प्रादुर्भवन्ति शतशो धर्मस्य परिपालनात् ॥

पाण्डव और कौरवों के आगे जिस समय दुःशासन ने द्रौपदी का वस्त्र खींचना चाहा उस समय द्रौपदी ने गोविन्द दामोदर, माधव ये नाम निकाले। ऐसे करुणा क्रन्दन से पुकारा कि भगवान् कृष्ण धर्म को साथ ले वस्त्रों में छिपकर आ गये— जिस समय द्रौपदी का वस्त्र खींचा गया, उसी समय क्या दीखता है, कि किसी स्वरूप का दूसरा वस्त्र द्रौपदी और पहिने है। द्रौपदी के शरीर में अनेक रंग विरंगे सहस्रों वस्त्र आ गये यह धर्म पालन का फल है। दुःशासन थक गया किन्तु द्रौपदी के वस्त्रों का अन्त न पाया। जब प्राचीन इतिहास भगवन्नाम शक्ति में साक्षी दे रहा है, तब इससे इन्कार मल्ल जी को छोड़ कर कौन करेगा भगवन्नाम शक्ति के अनेक इतिहास हैं। भक्ति योग संकीर्तन से ही भगवान् शीघ्र प्रत्यक्ष आ जाते हैं जैसे गजराज

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के पुकारने से भगवान् वैकुण्ठ से त्रिकूट पर्वत पर पहुँच गये। ऐसे सैकड़ों इतिहास प्रमाण हैं।

हरि: ॐ तत् सत् !!

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १४६ में सृष्टि कर्तृत्ववाद रक्षाकर्तृत्ववाद संहारकर्तृत्ववाद के खंडन का खंडन।

संसार के छोटे बड़े . कोई भी काम स्वत: बिना किये नहीं हो सकते और न उनका संचालन ही हो सकता। जैसे हम फौजदारी कानून से लाचार होकर अन्याय करने से डरते हैं। धन की अत्यंत जरूरत होने पर भी किसी का धन चोरी से या जवरदस्ती नहीं लेते वल्कि दूसरे को भी सिखाते हैं कि भूखे रहना ठीक है। किन्तु चोरी जवरदस्ती करके धर्म छोड़ना उचित नहीं है। खेती कटते ही कम अन्न होने पर भी सरकार की जमा देने के लिये प्रसन्नता पूर्वक अन्न वेंच डालते हैं। अनिच्छा रहते भी अपना काम समझते हैं। सरकार या पुलिस के मुलाजिम हर एक मनुष्य के पीछे नहीं लगे रहते, किन्तु अँधेरी रात में भी मनुष्य चोरी इत्यादि करने से डरते हैं। क्योंकि गुप्त रीति से सरकार प्रजा की रक्षक है। शासक रूप से सरकार सबके आगे पीछे सर्वदा मौजूद है। इसी तरह ईश्वर के कर्तृत्व को मानना चाहिये, हम ईश्वर को प्रत्यक्ष नहीं देखते। इसीलिये मानने से हिचकते हैं। किन्तु न देखने मात्र से अस्तित्व का अभाव मानना मूर्खता नहीं तो अज्ञानता जरूर है। जिसके प्रमाण से ये सब प्रमाणित हैं। उसका प्रमाण पूछना सूर्य्य का दीपक में देखना है। जैसे कोई पूछे कि मैं कौन हूँ कहाँ हूँ या

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं हूँ। जैसे हम गवर्नमेंट को नहीं देख पाते। अगर देखना चाहें तो बड़ी कठिनाई से सम्भव होगा। किन्तु न देखने पर भी लोग यह नहीं कह देते कि गवर्नमेंट नहीं है। जहाँ धूम है वहाँ अग्नि जरूर है; इस अनुमान द्वारा जब हम प्रजा हैं तब हमारी रक्षा करने वाला राजा जरूर है। इसी प्रकार ये दृश्यमान सम्पूर्ण जगत् को जो बनाने वाला है यदि यह कहा जाय कि संसार परमाणुओं से स्वतः बनता है। तो जैनियों के मकान स्वतः क्यों नहीं बन जाते, जैसे इन छोटे शहर देश के मजबूत मकानों का संहार प्रत्यक्ष रूप से देखा जाता है। इसी प्रकार ये ५०००००००० पचास करोड़ योजन का लम्बा चौड़ा ईश्वर का बनाया हुआ शहर है। इसका भी नाश उसकी इच्छा से होता है। जितना ही यह बड़ा है उतनी इसकी आयु बड़ी लम्बी चौड़ी है। जैनी लोग बीच ही में होकर नष्ट हो जाते हैं। तो इनको संसार के नित्य अनित्य का क्या पता संसार की बनावट संचालन इत्यादि की कार्यवाही की कुशलता देखकर ईश्वर के अस्तित्व में शंका नहीं रह जाती। जैसे वैशाख ज्येष्ठ के महीने में धूप मिली प्रचंड पवन चल रही है। पृथ्वी में हरियाली का नाम निशान नहीं है घास की एक सूखी राशि भी देखने में नहीं आती, जब बरसात आती है। तो समस्त भूमि हरी भरी दिखाई देती है। जिन चीजों का नाम निशान नहीं रह गया था। उस जगह के ऊपर वही वही चीजें दिखाई देती हैं। विचारने की बात है कि स्त्री पुरुष के संयोग से गर्भाशय में रजोवीर्य्य के संयोग से पिण्ड इत्यादि का बनना प्रत्येक अङ्ग का उन.२ जगह से तैयार होना यह ईश्वर के सिवाय और किसका काम है। समय २ पर मेघों का आकाश मार्ग से आकर वृष्टि का करना ये बिना किसी की आज्ञा से नहीं आ सकते। महाप्रलय के समय पंचभूत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परमाणु रूप में महाकाश में मौजूद रहते हैं। जीव कर्म माया की कोठरियों में बीज की भाँति पृथक २ रक्खे रहते हैं। सृष्टि का समय होते ही भगवान् के सत्संकल्प से परमाणुओं में शनैः शनैः घनता होने लगती है। और घनता होने पर उनके प्रत्यक्ष पिण्ड बन जाते हैं। तथा ईश्वर की प्रेरणा से कर्मानुसार सब जीवों को ब्रह्मा पूर्वोक्त भूलोक आदि भादों की खेती की भाँति आबाद कर देते हैं।

यह संसार अनादि है, इस सिद्धान्त को मानने के लिये प्रायः सभी एक मत हैं। इसी प्रकार जीव व उनके कर्म भी अनादि हैं। ये ही असंख्य पूर्व जन्म के कर्मों के फल के ढेर जिसके अधिकार में रहते हैं। वही ईश्वर का इजलाश है। बस इसी न्यायालय के जरिये ८४ लाख योनियों पर परमेश्वर सत् पुरुषों द्वारा शासन करता रहता है, अर्थात् सुख दुख कर्मानुसार देता रहता है। जो फल जिसे जैसा समझता है, उसका उसी तरह ठीक ठीक उचित समय पर देता है हम चाहते हैं कि उत्तम ही उत्तम स्त्री, पुत्र, धन, राज्य, शासन हमेशा हमारे पास बना रहे। परन्तु न जाने बीच में कौन कार्रवाई करते हैं कि कुछ सोचते हैं, कुछ हो जाता है, यदि यह कहा जाय कि पूर्व जन्म का किया हुआ कर्म ही फल देता है। सो कर्म तो जीव की शरीर द्वारा क्रिया ही है। वह तो पूर्व जन्म ही में नष्ट हो गया था। यदि यह कहो कि कहीं रक्खा रहा तो अपने शिर के काटने के लिये अपने ही पास में तलवार बड़े अच्छे प्रबन्ध से कैसे रक्खेगा। क्योंकि जीव तो अपने मन से जेल जाना ही नहीं चाहता, किन्तु मजा उठाना चाहता है। तो क्या जीव स्वयं जेल चला जायगा, नहीं, किन्तु प्रजा-वत्सल दर्बार के कर्मचारी अपनी बुद्धि वा चातुर्य्यता से हमारा पता ठीक २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लगा कर घुस पड़ते हैं। मैं कर्मचारियों को इत्तला नहीं देता हूँ बल्कि और उनसे छिपाता हूँ, कर्म तो मेरा किया ही है, पर बीच में राजा घुस कर कर्मचारियों के द्वारा जेल के हवाले करता है, अब जैनी महाशयों को समझ लेना चाहिये कि उनके किये हुये कर्मों के फल को ईश्वर ही देता है। वह भगवान् ब्रह्मा रूप से सृष्टि करते हैं। विष्णु रूप से पालन करते हैं। शङ्कर रूप से संहार करते हैं, सृष्टि रक्षा संहार जीवों के कर्मानुसार ही भगवान् करते हैं। टोडरमल्ल ने यह प्रश्न किया कि "तिनकौं किस अर्थ बनाये तो इसका उत्तर यही होगा कि अनादि कर्म वासना से कर्म बन्धन में पड़े हुये पुत्र रूपी जीवों के ऊपर भगवान् की भक्त वत्सलता ही सृष्टि रक्षा संहार दण्ड का कारण है। क्योंकि राजा जैसे अपनी प्रजा के शिक्षित होने के लिये अनेक पाठशाला खोलते हैं और उसमें जबरदस्ती प्रजा को पढ़ाते हैं। अब उनको उनसे क्या लाभ है। लाभ तो यही होगा कि प्रजा जब शिक्षित हो जायगी तब राजा को अत्यधिक संतोष होगा और राज्य में सर्वदा सुख ही सुख देख पड़ेगा। क्योंकि सुख का कारण धर्म ही है इसीलिये भगवान् की सृष्टि रूपी पाठशाला खोल कर संहार रूप दण्ड से बारम्बार चेतावनी देते हुये असंख्य जीवों को अपने सच्चिदानन्द स्वरूप की तरह होने का उपदेश स्वयं अवतार लेकर या वेद ब्राह्मणों द्वारा देते हैं। अब ऐसे भक्त वत्सल भगवान् के सृष्टि संहार रक्षा कर्तृत्व को लौकिक दृष्टान्तों से प्रत्यक्ष समझते हुये यदि शङ्कित समझें तो सनातन धर्मी विद्वानों से समझ कर अपने अज्ञान को दूर करें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १६५, १६६ में अवतार मीमांसा का खंडन"

ईश्वर का तर्कावतार

टोड़रमल्ल महाशय ने "बहुरि चौईस अवतार भए कहे हैं, ऐसा कह, तब ब्रह्म अन्यत्र व्यापि रह्या किन रह्या-विना अवतार धारे ब्रह्म की शक्ति तिस कार्य के करने की न थी" इत्यादि अवतारों के ऊपर जो विना सोचे-समझे बकवाद किया है, वह सर्वथा असत्य है। ईश्वर का अवतार प्रत्यक्ष वाद से ही सिद्ध है। जैसे कि हरएक जगह के ऊपर अग्नि निराकार रूप से विद्यमान है। इसमें देशकाल का नियम बाधा नहीं पहुँचा सकता, सदा सर्वत्र एक रस है। किसी भूखे मनुष्य को आवश्यकता पड़ी कि रोटी वनानी चाहिये किन्तु अग्नि कहाँ मिले परन्तु भूख के मारे प्राण छटपटाते हैं। धीरज नहीं होता, अग्नि कहाँ मिले यह धुन सवार हो गई। जेब में हाथ डाला तो पास ही में दियासलाई थी। हाथ में आ गई लोग कहते थे कि यह अंगार की पेटी है। इधर उधर उलटा कर देखा तो कहीं अग्नि का पता नहीं है। किन्तु उसकी सलाइयों में एक तरफ कुछ मसाला सा दिखाई पड़ा। स्वभावतः उसको उठा कर ज्यों ही पेटी में रगड़ा कि अकस्मात् अग्निदेव चमक उठे सलाई जलने लगी। पास ही के तृण में उसे लगा दिया। अब वड़ी आरामी के साथ रोटी बनी, जैनी महोदय ने पेट भर खाया। बच भी गई जैनी महाशय का जब तक पेट न भरा था तब तक भगवान् को साकार व अवतार माना, जब पिट्टू का पेट भर गया तब ईश्वर के अवतार का दिवाला ही निकल गया। वाहरे पिट्टू जैनियो,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुम्हारी कृतघ्नता को धिक्कार है। यह बात किसी हल जोतने वाले से भी पूँछी जाय कि यह अग्नि कहाँ से आई, क्यों आई, कैसे आई, सम्पूर्ण है या असम्पूर्ण है, इसकी पहिचान क्या है। इस अपील का फैसला वह अपने हृदय से सोचकर उचित ही देगा। यह अग्नि का उदाहरण ईश्वर के अवतार के बाबत पूर्णतया नहीं घट सकता किन्तु करें क्या, बिना उदाहरण को लिये लोगों की दलीलें ही नहीं चुकतीं। जब दैत्य, ब्राह्मण, गौ, देवता इत्यादि को बिना अपराध कष्ट देते हैं ईश्वर के अस्तित्व मिटाने ही में एक मात्र वीरता समझते हैं।

तब भक्तों को संकट में पड़ा जानकर प्रेम वश विना परिश्रम शीघ्र प्रगट हो जाते हैं। ये अवतार देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, जलचर, वनचर इत्यादि योनियों में जहाँ जैसी आवश्यकता पड़ी वहाँ भक्त के प्रेमवश सर्वशक्तिमान् स्वरूप से प्रगट हो जाता है। जैसे अग्नि ही कहीं तृण रूप ईंधन में है कहीं पाषाण में, कहीं जल में हैं। इन २ जगह पर प्रगट होकर जैसे सबके मनोरथों को पूर्ण करती है। उदर में वैश्वानर रूपधारण कर चार प्रकार के खाये हुये पदार्थों को पचाती है। उसी प्रकार भगवान् सर्वत्र एक रस रहते हुये भी उन २ भक्तों के मनोरथ के अनुकूल उन २ योनियों में प्रगट होते हैं। अब यहाँ ये प्रश्न जैनी उठाते हैं कि जब वह सर्व शक्तिमान् है तो वहीं रहते हुये वे अपने नौकरों को भेजकर भक्तों का दुख क्यों नहीं दूर कर देते, आप खुद क्यों अवतार लेते हैं। यही प्रश्न अकबर बादशाह ने बीरबल से किया था कि ईश्वर खुद भक्तों का दुख दूर करने के लिये दुनियाँ में क्यों कूद पड़ते हैं। मुसाहिबों से क्यों नहीं कराते। इसके जवाब देने के लिये बीरबल ने एक महीने की म्याद माँगी म्याद मिल गई। वहीं पर कारीगर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो कि बड़ा होशियार था उसे बीरबल बुलाकर अकबर का लड़का जो कि १॥ वर्ष का था उसकी मोम की मूर्ति तद्रूप बनाने का हुक्म दिया। कारीगर बड़ी सावधानी से पचीस दिन में जैसी मूर्ति चाहिये था वैसी ही बनाकर ले आया। बीरबल बहुत खुश हुआ। उसे तीन हजार रुपये इनाम दे विदा किया। वसन्त की बहार है और जल क्रीड़ा की धूम धाम हो रही है। यमुना में एक अच्छी सजी हुई नाव पर बादशाह अकबर निजी सरदारों के साथ सवार हैं। चतुर मल्लाह लोग भी नाव चलाने को मौजूद हैं। बादशाह बीरबल के आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कुछ अँधेरा सा दिखाई देने लगा, इतने में बीरबल बादशाह के शाहजादे को गोद में लिये आ पहुँचे बीरबल को देखते ही बादशाह खुश होगये। झट नाव पर चढ़ा लिया, नाव चलने लगी, बादशाह ने शाहजादे को साथ लाने का कारण पूछा तो बीरबल ने कहा कि

ऐ हुजूर! जब किले में ताबेदार पहुँचा तो पता मिला कि आज शाहजादा साहब ३ घंटे से इकदम रो रहे हैं। किसी भाँति नहीं मानते। मैं भी सेवा में पहुँचा, ज्योंही अपनी गोद में लिया कि हँसने लगे और खेलते २ सो गये। यहाँ हुजूर का भी हुक्म उधर फिर पूर्ववत् रोने का डर था। इसलिये लाचार होकर ताबेदार शाहजादे को लेकर ही हाजिर हुआ। इतनी इबारत पूरी होते २ नाव यमुना के मध्य धारा में पहुँची। न मालूम कैसी घटना हुई कि बीरबल हाय २ कह चिल्ला कर रोने लगा। शाहजादे धम से पानी में गिर पड़े थे। इस घटना को देख बड़ी फुरती के साथ बादशाह अकबर पानी में कूद पड़े। और बच्चे को पकड़ लिया। हाथ लगते ही मालूम होगया कि वह शाहजादा नहीं है किन्तु मोम का पुतला है। बादशाह के पास

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाव पहुँची। मल्लाहों ने बड़ी आसानी से चढ़ा लिया, कुछ देर बाद वीरबल की शैतानी में खफा हो बादशाह ने कहा कि वीरबल, तुमने मुझसे कौन सी बात का बदला लिया, वीरबल बोले, हुजूर बदला कैसा। बादशाह बोले अरे, तुम्हें बदला शब्द का पता तक नहीं और मैं सदा के लिये विदा।

वीरबल, आप नदी में कूदे क्यों। क्या ऐसी जरूरत थी, मुसाहिबों और मल्लाहों को क्यों न आज्ञा दी। बादशाह, अरे शैतान, ऐसे मौके पर आज्ञा देने का अवकाश कहाँ था। वीरबल, हुजूर जनाब अपराध क्षमा हो, खास इसी तरह भक्तों की तकलीफ देख मुसाहिबों को आज्ञा देना भूल कर परमेश्वर खुद दुनियाँ में कूद पड़ते हैं। ये शैतानी नहीं है किन्तु हुजूर की ही आज्ञा का पूर्णतया पालन हुआ है। क्योंकि आपने ईश्वर के अवतार के विषय में हमसे प्रश्न किया था कि ईश्वर अवतार क्यों लेता है, इस वीरबल के उदाहरण से अपने शरीर द्वारा ईश्वर का अवतार स्वीकार कर लिया। यदि ईश्वर अवतार धारण करे, तो कर्म बन्धन के बिना किस प्रकार शरीर ग्रहण कर लेगा ऐसा प्रश्न करने पर यह उत्तर होगा कि राजा जैसे जेल में बिना अपराध के जाता है। उसके वहाँ जाने में कैदियों की तरह कर्म बन्धन कारण नहीं है। किन्तु कैदियों के ऊपर जो दया है वही अवतार में हेतु हैं। जैसे अजन्मा जीव का जन्म होता है। वैसे ही अजन्मा ईश्वर का भी जन्म होता है। जैसे दियासलाई में व्याप्त निराकार अग्नि घिसने से साकार बन कर दिया जलाती है वैसे ही निराकार ईश्वर साकार हो जाता है। जैसे दूध में एक रस रहने वाला घृत साकार हो कर हलुवा पूड़ी बना देता है ऊख में एक रस रहने वाला रस साकार हो कर शक्कर मिश्री तैय्यार हो जाती है। वैसे ही एक रस ईश्वर भी अवतार धारण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर सृष्टि रचा प्रलय करते हैं। जिस प्रकार से ईश्वर की साकारता में जैनी अनेक प्रकार के कुतर्क करते हैं, उसी प्रकार ईश्वर भी अपनी निराकारता को ही ग्रहण किये रहे। और अग्नि इत्यादि निराकार अपने नौकरों को भी निराकार ही किये रहें। तब तो जैनी उसी दिन से वैद्य डाक्टरों की शरण ले खटिया देवी के भक्त बनें। और इति श्री भी हो जायँ।

जब ईश्वर शरीर धारण करके वृन्दावन आ गए तो क्या वृन्दावन को छोड़ बाकी सब जगह विना ईश्वर की हो गई, नहीं, जैसे एक निराकार अग्नि जो समस्त ब्रह्माण्ड में व्यापक है वही सायंकाल बक्सर में साकार बन कर सैकड़ों दियों में प्रकाश करने लगी। वही अग्नि अयोध्या में हजारों रूप धारण कर के प्रकाश कर बैठी। प्रयाग में इसने लाखों स्वरूपों से प्रकाश कर बाज़ार में रात्रि को दिन कर दिया। अग्नि ने बक्सर आदिक स्थानों में करोड़ों रूप धारण करने पर भी जैसे संसार में पावक (अग्नि का अभाव) नहीं होता है। वैसे ही ईश्वर अवतार धारण करके वृन्दावन आगये। तब भी व्यापक ईश्वर का संसार में अभाव नहीं होता।

यदि एक ही समय में ईश्वर के आठ ८ अवतार में संदेह हो तो इसका उत्तर यह है कि एक व्यापक अग्नि छोटे बड़े सब प्रकार के करोड़ों रूप धारण किये एक रूप ने दूसरे रूप की रुकावट न किया। वैसे ही ईश्वर भी एक समय में अनेक रूप धारण करते हैं। एक रूप दूसरे रूप की रुकावट नहीं करता, ईश्वर सर्व शक्तिमान् होने के कारण वैकुण्ठ में विराजमान होते हुए भी संसार के सर्व कार्य कर सकता है। परन्तु एक शक्ति-हीन होकर सर्व शक्तिमान कहलावेगा। वहाँ आने की शक्ति ईश्वर में नहीं है। यह बात एक शक्ति कम सर्व शक्तिमान् इस दोष को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मान कर मेरे मुँह में जिह्वा नहीं है। इसका उदाहरण बन जायगी जैसे उपदेश देने वाले जिस प्रकार से शिक्षा देते हैं उसी प्रकार से यदि आचरण भी करते हैं तो उसका प्रभाव अच्छा पड़ता है और लोग शिक्षक के प्रत्यक्ष उपदेश को करने भी लगते हैं। और उससे कभी अलग नहीं हो सकते। उसी प्रकार ईश्वर भी वेद रूपी शिक्षा को करने के लिये व उसी प्रकार आचरण कर कर्म के फल को प्रत्यक्ष दिखाते हुए हिन्दू सनातन धर्म की वर्णाश्रम धर्म व्यवस्था को जबरदस्त बनाते हुये पुण्यात्मावों को सुख, दैत्यों को दंड देकर धर्म की रक्षा करते हैं। आज इन्हीं अवतारों का फल प्रत्यक्ष स्वरूप में आरहा है कि बाइस करोड़ हिन्दू अवतार को मानने के लिये मौजूद हैं और मौजूद हमेशा बने रहेंगे। ईश्वर ने अवतार लेकर साधारण धर्म का उपदेश साधारण मनुष्य की तरह आचरण कर दिया है। ऐसे पवित्र अवतारों पर भी निरीश्वरवादी टोड़रमल्ल ने व्यर्थ शंका किया है। सो उनकी शंका का उत्तर लिखा जा चुका है। इसी बात को भक्त शिरोमणि महात्मा तुलसीदास जी ने चित्रकूट में रामावतार को प्रत्यक्षीकरण करके स्वयं निराकार का साकार अपने काव्य में कहा है कि—

बिन पद चलै सुनै बिन काना,
कर बिन कर्म करै विधि नाना।

ऐसा निराकार स्वरूप कह।

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेशा।
तुमहिं लागि धरिहौं नर वेशा।

जिहिं इम गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दशरथ सुत भक्त हित, कोशल पति भगवान्॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस दोहे से साकार बनना सिद्ध कर स्वयं दर्शन भी किया और इसी अवतार के स्वरूप को परम भागवात प्रह्लाद ने व ध्रुव ने प्रत्यक्ष कर संसार का कल्याण किया। जिसने एक बार भी प्रह्लाद व ध्रुव के इतिहास को सुना होगा। वह ईश्वर के अवतार को उसी क्षण मान लेगा। ईश्वर के अवतारों में प्रश्न करने वाले टोड़रमल्ल जैनी से हमारा प्रश्न है कि ईश्वर जितने काम करता है उन सब की जरूरत को क्या वे समझ गये, यदि सब की जरूरत समझ गये, केवल अवतार की बाकी रह गई हो तो अवतार की जरूरत हम वेद से बताते हैं। यदि तुम ईश्वर के किसी भी काम की जरूरत नहीं समझे, ईश्वर के सभी कामों में तुम्हारी बुद्धी चौपटानन्द है, तो फिर तुम्हारा कौन हक है कि जिससे तुम अवतार लेने की जरूरत का प्रश्न करो।

हम पूछते हैं कि ईश्वर ने और काम किये सो किये किन्तु साँप को क्यों पैदा किया जिसके फूँ करते ही आदमी टैं हो जावे। साँप के पैदा करने की क्या जरूरत है। हम मान लेंगे कि आपने अभी सांप की ज़रूरत का सबक नहीं पढ़ा। आप यही बतलाइये कि शेर क्यों बनाया गया। जो संसार के प्राणियों को कच्चा ही चबा जाता है। इस शेर की क्या ज़रूरत। आप यह भी बतला दीजिये, कि मनुष्य के मूँछ दाढ़ी क्यों लगा दी। एक लड़का पैदा हुआ। १८ वर्ष की उम्र तक उसका मुख चिकना बना रहा। इसके बाद मुख पर बाल जमने शुरू हुये। २ वर्ष में बालों ने मुख को घेर लिया। अब यदि आठवें दिन नाई को न बुलवावें तो खरदूषण जैसी सूरत हो जावे। और जिन तुम्हारी माँ बहिनों के मूंछ दाढ़ी नहीं जमी उनका क्या बाप मर गया है। बतलाइये इस मूंछ दाढ़ी की क्या जरूरत है। इससे सिद्ध हो गया कि अवतार की आवश्यकता को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईश्वर ही समझता है न कि व्याघ्रचर्मप्रतिच्छन्न रासभ, जैनी।

"मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १७० में यज्ञ संबंधी पशु हिंसा के खंडन का खण्डन"

टोडरमल्ल ने "यज्ञार्थंपशवः सृष्टाः" इत्यादि मनुस्मृति पञ्चम अध्याय के श्लोक के अर्थ को न समझते हुये केवल सूखी वीतराग की ढपली बजा कर अपनी अक्ल का दिवाला जाहिर किया है। यदि दूसरे धर्म की निन्दा रूप वीतराग से संसार वन्धन छूट जाये तो जैनियों से अधिक वीतरागी जितने पाषाण, वृक्ष, पहाड़ आदि सभी जड़ वस्तुयें मुक्त होकर विदा हो जायँ। यदि कहीं पृथ्वी ही मुक्ति की इच्छा मात्र कर दे तो जैनियों की तो इतनी भग दौड़ मचे की वीतराग से हजारों कोस दूर जा बसें, नगर में प्रवेश कर भोजन के समय स्त्री, पुरुषों के सम्मान को लेकर मन में संकल्पित राग से किसी एक के भोजन करना औरों के उत्साह को हताश कर बीत राग प्रगट करना कितनी बड़ी भारी धूर्तता है। क्या बीत राग का यही लक्षण है। यदि बीत राग देखना हो तो अभी भी सनातन धर्मियों में चित्रकूट बद्रीनारायण क्षेत्रों में छिपे हुये हजारों की तादाद में परम योगी भगवान्‌के चरण में ध्यान लगाये अपने जीवन व्यतीत कर रहे हैं। जिनका दर्शन कभी २ बड़े कष्ट से होता है। जिनको भोजन वस्त्र इत्यादि की कुछ भी जरूरत नहीं है, और नित्य-नैमित्तिक तप रूप से कर्मों को जगत् के कल्याण के लिये ८८००० ऋषि हिमालय में कलाप इत्यादि ग्रामों में निरन्तर कर रहे हैं। सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, सनातन, नारद, यह भगवद्भक्त हरि कीर्तन करते हुये तीनों लोकों में हमेशा गुप्त रीति से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यात्रा किया करते हैं। जिनके प्रबल भक्ति योग से ऐसी घोर आपत्ति में भी कल्याण हो रहा है।

अभी थोड़े दिन की बात है कि छपरा के पास गङ्गा के तट में हमेशा भजन करने वाले वीतरागी स्वामी जी १००८ रामानुज सम्प्रदायाचार्य विष्वक सेनाचार्य जी महाराज विराजमान हैं। एक समय चतुर्मास्य व्रत में लगे हुए एक ही आसन से विराजमान थे। गंगा का जल महराज के आसन के चारों तरफ आ गया परन्तु गंगा जी ने महाराज को गोद में ऐसे लिये हुये माता की तरह रक्षा किया। इस दृश्य को देखने सभी रईस लोग गये थे। हमने उदाहरण स्वरूप में स्वामी जी को दिया है। जिन्हें इच्छा हो वहाँ जाकर दर्शन करें।

श्री १००८ श्रीमद् रीवा राजगुरु स्वामी जी महाराज की भगवत् में भक्ति प्रपत्ति व शम-दम अक्रोध त्याग इत्यादि गुण दक्षिण उत्तर भारत में किसी विद्वान् व महाराजा से अविदित नहीं हैं, आजन्म से महाराज का भगवत् में प्रेम इसी प्रकार चला आ रहा है।"

क्या कहें अन्धे के लिये सूर्यनारायण ही क्या करेंगे। उसके लिये रात्रि दिन बराबर ही है। आज सनातन धर्म ही में ऐसी ऐसी पतिव्रतायें योगेश्वरी वर्तमान हैं जिनको साक्षात् अग्नि देवता गोद में बैठने के लिये आप स्वयं शीतल हो कर स्वागत करते हैं जिनके दर्शन कर भारत के कोने २ के सेठ, विद्वान्, साधू, राजा, महाराजा, आ आकर स्वयं कृतकृत्य हुये। क्या

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसी देवियों की जैनी ऐसे धूर्तों को छोड़ कर कौन मजहब समालोचना करेगा, आज इन्हीं यज्ञों का फल है कि इन्द्र देव कुछ न कुछ वर्षा कर ही देते हैं।

जिस समय में महाराजा दीलीप, सगर, दशरथ इत्यादि ने हजारों यज्ञ किया था, उस समय हिन्दू इतिहास यह बतला रहे हैं कि कभी भी जल का अभाव नहीं होता था। एक बार बोने से दश-दफे काटते थे। पृथ्वी प्रजा की मनमानी धार्मिक मांगों को पूरी करती थी। भगवान रामचन्द्र जी के राज्य में तो कोई विधवा न होती थीं। अथाह जल में तैरने से जल छोटे बालकों को भी न डुबोता था अग्नि से जलने का भय किसी को न था, कोई रोगी न था न कोई दरिद्र था। भगवान् के ११००० वर्ष राज्य करने पर भी तीन ही मुकदमा आये। यह सब यज्ञों के करने से देवताओं की प्रसन्नता का कारण था। आज भारत में विदेशियें के राज्य होने के कारण संस्कृत विज्ञान के कमती होने से यज्ञ रुक गये। इन वेद के मंत्रों को कोई अग्निहोत्री ही शायद प्रत्यक्ष किया हो कि जिनके द्वारा पुत्रेष्टि इत्यादि यज्ञों में स्वर्ग से इन्द्रादि देवता बुला लिये जाते थे। पूर्णाहुति के बाद अग्नि कुण्ड से प्रजापति दिव्य पुरुष प्रगट हो यजमान के मनोरथ को सिद्ध कर अन्तर्ध्यान हो जाते थे, और अश्वमेधादि यज्ञों में जो लोग हिंसा कहते हैं वह उनकी कूप मण्डूकता है। मांस खाने के उद्देश्य से हिंसा नहीं होती थी किन्तु संसार के कल्याण के लिये यज्ञ होते थे, यहाँ तो बड़े बड़े ब्रह्मवादी सिद्धान्त वेत्ता मुनीश्वर यज्ञ कराते थे। देवताओं का आवाहन कर सामने बुला लेते थे, उन मृत पशुओं को जिला देते थे और जीर्ण शरीर से जीव को अलग कर दिव्य शरीर प्रकाश-मान दिला कर विमान में स्वर्ग के लिये भेज देते थे, जिसके जाते समय में देवता पुष्प

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्षा कर जय-जय शब्द करते थे जिस हिन्दू धर्म ग्रन्थों में यज्ञ में पशु का हिंसन लिखा है। उसी ग्रन्थ में सब के देखते-देखते पशु का आकाश मार्ग से स्वर्ग में जाना भी लिखा है, यदि पशु की हिंसा यज्ञ में सत्य मानते हो, तो उसका फल रूप स्वर्ग की प्राप्ति भी मानों। यदि स्वर्ग का ग्रन्थ झूँठा है तो पशु की हिंसा भी झूँठी है। बताओ सही पशु का बध कहाँ लिखा है। यदि दिखाओगे तो हम एक ही पन्ना उलटा कर सब के देखते पशु का स्वर्ग में जाना भी तुर्त दिखला देवेंगे। विचारने की बात है कि मैं एक पुरानी झोपड़ी में रहता था, बहुत छोटी मजदूरी से गुजर करता था, अब किसी ने आकर मुझे उस झोपड़ी से निकाल दिया। बाद में मुझे एक पक्के किले में भेज दिया। इलाकेदारी भी दे दिया तो अब बतलाइये कि झोपड़ी गिराकर निकाल देने का पाप ज्यादा होगा कि इलाके का राजा बना देने का पुण्य ज्यादा होगा। आप ही स्वयं फैसला कर लें। इसी प्रकार पुरानी झोपड़ी रूप शरीर से निकाल कर इलाके रूप स्वर्ग में भेज देने से कितना बड़ा भारी पुण्य हुआ। बिना हिंसा के तो श्वास लेना भी कठिन है। १ गिलास पानी में हजारों कीड़े रहते हैं। जो कि सूक्ष्म दर्शक यन्त्र से प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं। इसी तरह श्वास में लाखों कीड़े मरते हैं। दूध, घी, तेल, दही, दाल, भात इत्यादि का भी यही हाल है। मल-मूत्र, शुक्र, रुधिरादि तो उनका स्थान ही है। जैनी भी इन चीजों के स्थान हैं। तो ये लोग त्रेता द्वापर में कभी धर्म के लिये १ पशु बध को कैसे कह रहे हैं। इनकी हिंसा की संख्या तो १००००० एक लाख पूज जाती होगी। ठीक है क्या यही हिंसा ही अहिंसा या वीतरागता है। हिन्दुओं के यहाँ तो जल श्वास भोजन की सामग्री दूध, दही, घी, तेल, इत्यादिं व चूल्हा, चक्की, बहरा उखरी, खेती, कायिक, वाचिक,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मानसिक इत्यादि में हुई हिंसा के पाप से छुड़ाने के लिये वेदों में त्रिकाल संध्या बन्दन व पंच महायज्ञों का विधान है।

जैनी लोग तो इन हिंसाओं की खबर तक नहीं करते। केवल पानी की कपड़-छान और अहिंसा २ का चिल्लाना ही करते हैं। जैनी बिना खाये पिये तन्दुरुस्त हट्टे कट्टे तो रह नहीं सकते। इस वास्ते सनातन धर्मी ही अहिंसा सांगोपांग मानते हैं।

दूसरा पक्ष यज्ञ में पशु हिंसा का यह भी है। वैदिक प्रयोग हिंसा के बहाने से अहिंसा का ही समर्थन करते हैं। वे यज्ञ रजोगुणी और तमोगुणी प्रकृति वाले मनुष्यों को भी क्रमशः हिंसा के बहाने अहिंसा का विधान कर सात्विक मार्ग में लाने के लिये हैं। क्योंकि मनुस्मृति इत्यादि धर्मशास्त्रों में दोनों पक्ष अधिकारी भेद से अलग अलग हैं जो सात्विक भगवद्भक्त हैं। वे तो हिंसा के भय से चलना फिरना भोजन भी बन्द कर देते हैं। इन वीतरागी सात्विक भक्तों के लिये मनु भगवान् अ० ५ श्लो० ४८ में माँस का सर्वथा निषेध करते हैं।

"नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मात् मांसं विवर्जयेत्॥
समुत्पत्तिं च मांसस्य वधबंधौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षणात्॥
यावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वोऽहमारणम्।
वृथा पशुघ्नः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि॥
योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया।
स जीवंश्च मृतश्चैव न क्वचित्सुखमेधते॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थ

जीवों की हिंसा किये विना माँस कहीं नहीं मिलता है प्राणियों का वध स्वर्ग देने वाला नहीं है इसलिये माँस को न खाय। माँस की उत्पत्ती को जीवों के बध और बंधन को अच्छी तरह से देख कर सब माँस के भक्षण से निवृत्त हो जाय अर्थात् सब माँस का खाना छोड़ देय। जितने पशु के रोम होते हैं उतने वार प्रत्येक में जन्म वृथा पशु मारने वाला फाँसी के दण्ड को प्राप्त होता है।

जो अहिंसक प्राणियों को अपने सुख की इच्छा से मारते हैं वे जीते हुये व मरने पर कहीं भी सुख नहीं पाते। यदि सात्विक वीतरागी भी संसार के कल्याण के लिये यज्ञ करना चाहें तो उनके लिये भी मनु भगवान् आज्ञा देते हैं।

कुर्य्याद् घृतपशुं संगे कुर्य्यात् पिष्टपशुं तथा।
नत्वेव तु वृथा हन्तुं पशुमिच्छेत् कदाचन॥

अर्थ

संसार के कल्याण के लिये घी का पशु व पिसान का पशु बनावे वृथा पशु के मारने की इच्छा कभी भी न करें, उसी घृत पिसान के पशु को आहुति कर शेष प्रसाद पावै। जैसे राजा बलि और दिलीप सगरादि ने लोक मर्य्यादा के लिये किये हैं। ये लोग माँस खाने के लिये नहीं किये हैं। ध्रुव प्रह्लाद और श्री १००८ परमैकान्तिक परमवीतरागी जगद्गुरु श्रीशठकोप स्वामीजी व श्रीकूरेश स्वामीजी महाराज, इत्यादि भक्ति योगियों ने हर एक प्रकार की अहिंसा का पालन किया है। जो जन्म होते ही एकासन से बैठ कर ३० वर्ष तक उसी तरह बैठे रहे भोजन जल कुछ भी नहीं पाया न कि केवल रात्रि का भोजन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न करना ही अहिंसा माना है मरे हुये पशु को यज्ञ में सबके देखते विमान से स्वर्ग को पहुँचाते थे। इस नियम को मनु जी ने सृष्टि के आरम्भ में वैदिक विधि से प्रकाश किया है। अ० ५ श्लो० ४२

एष्वर्थेषु पशून् हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः ॥
आत्मानं च पशुं चैव गमयत्युत्तमां गतिम् ॥

तमोगुणी जीवों के लिये तीसरा पत्त मनु भगवान् कहते हैं।

यज्ञाय जग्धिर्मांसस्येत्येष दैवो विधिःस्मृतः ॥
अतोऽन्यथा प्रवृत्तिस्तु राक्षसो विधिरुच्यते ॥

कोई बच्चा रोगी है उसे अच्छा होने के लिये दवा खिलाई जाती है। हठ वश दवा नहीं खाता माता गुड़ के बहाने से दवा देती है। इसी प्रकार ईश्वर तमो गुणी जीव रोगियों को हिंसा रोग हटाने के लिये यज्ञ रूपी दवा का विधान किये हैं। क्योंकि जो रोज दश जीवों का वध करते हैं। उनको शास्त्र, यज्ञ में पशु हिंसा से पुण्य के वहाने प्रतिदिन की हिंसा को रोकता है। यज्ञ में मांस, देवदृष्टि से औषधि रूप हो मांस खाने के स्वभाव को नाश कर अहिंसा पैदा करता है। अब पाठक गण विचारें कि यह यज्ञ में एक पशु के मरने से जिन्दगी भर में प्रति दिन अनेक जीव हिंसा के हिसाब से हजारों जीवों का प्राण बचाकर यजमान को हिंसासे रोकना ही शास्त्र सिद्धांत है। जैसे बच्चा को माता कहती है कि बेटा दवा खालो मैं अभी मिठाई देती हूँ माता थोड़ी मिठाई देती है। आखिर दवा खाते खाते जब रोग हट गया तो मिठाई की चाह भी चली जाती है। क्योंकि रोगी रोग से व्याकुल होकर कुपथ्य मांगता है। रोग हट जाने से कुपथ्य से स्वयं अरुचि हो जाती है। इसी तरह मांसाहारियों को भी शनैः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शनैः मांस खाना छुड़ाने के लिये पुरोडाश रूप प्रसाद की दवा से मांस में अरुचि के लिये ही इन विधानात्मक निषेधों का प्रयोग किया है। जो कहीं २ पर देवी इत्यादि के स्थानों में हिंसा होती है। वह मूर्ख समाज की अज्ञानता है। क्योंकि शास्त्र में देवी के लिये बलिदान का विधान ऐसा नहीं है। पहले कहे हुये यज्ञों में जैसे मरा हुवा पशु सबके देखते २ स्वर्ग जाता था वैसे यदि इनमें भी ताकत है तो प्रत्यक्ष स्वर्ग में शास्त्र प्रमाण से पशु को दिव्य शरीर से पहुँचावें। कलियुग में तो इस शक्ति का होना सम्भव ही नहीं है इसलिये शास्त्र कलियुग में यज्ञ से हिंसा का निषेध किया है। ऐसे शुद्ध न्याय से गुम्फित अहिंसात्मक वैदिक मार्ग को न समझ कर व्याघ्रचर्मप्रतिच्छन्न रासभ जैनियों ने अपने ग्रंथ में स्वयं हिंसा का बयान किया है। यह बात पूर्व कह आये हैं जैनियों के मुनियों ने भोजन के लिये ग्राम प्रवेश में हिंसा का विधान किया है। क्योंकि जिस खेती से उत्पन्न पदार्थ हैं उस खेती के करने में हिंसा ही हिंसा है। उसकी अवहेलना करके कांड़ी मूसल देखने मात्र से सैकड़ों आदमियों के बने भोजन नष्ट कर नव युवतियों के दर्शन मात्र से तृप्त हो केशशुञ्चनादि करते हैं। जो कुछ इनमें अहिंसा है भी—वह हिन्दुओं की अहिंसा की आभा मात्र है। क्योंकि प्रथम ये हिंसक हैं। बाद में मुनी हुये।

"हरिः ॐतत् सत्"

कृष्णावतार

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १६७ में

कृष्ण जी की रासलीला का खंडन जो ग्रन्थकार ने किया है उसका वेद शास्त्र युक्तियों द्वारा खण्डन।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टोडर मल्ल महाशय ने "ऋषीणां दारान् रममाणानां" इस अपने सिद्धान्त से मन्दिरों में नवीन षोड़श वार्षिका स्त्रियों का प्रथम यात्रा में जिन देव से भोग कराना समझा है। उसी कलङ्कित दृष्टि से योगेश्वर भगवान् श्री कृष्ण को समझ कर बुद्धि का दिवालाकर. लेखनी पकड़ा है। सो यह सब कपोल कल्पित है भगवान् की रासलीला का गूढ़ सिद्धान्त यह है किसी समय कामदेव ने ब्रह्मा से लेकर पशु पक्षियों तक विजय कर लिया इससे कामदेव का दर्प बढ़ गया और कामदेव भगवान् कृष्ण के पास आया और बोला कि हमने समस्त संसार का विजय कर लिया। अब इच्छा है कि हमारा आपका संग्राम हो जाय लड़ाई के लिए लम्बा चौड़ा मैदान हो आपके सामने हमारे बड़े २ सेनापति खड़े हों हमारे बड़े २ वीर हमारी विजय करने के लिए तैय्यार हों। फिर देखिए किसका विजय होता है। हम किले के युद्ध में धोखा खा चुके हैं। शंकर समाधि रूप किले में छिप गए थे हमारे योद्धाओं को शंकर जी ने ज्ञान रूप दंड से भस्म कर दिया। भगवान् श्री कृष्ण ने कामदेव की ऐसी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया। और कामदेव के अनुकूल समय आने पर जब कि शरद् ऋतु में लता वृक्षों में भिन्न २ प्रकार के सुगंधित पुष्प वृन्दावन को सुगन्धित कर रहे हैं। शीतल मन्द सुगन्ध वायु चल रही है चन्द्रमा पूर्ण मंडल से निकल कर अपनी किरणों द्वारा कामियों के काम को बढ़ा रहा है। श्रीकृष्ण चन्द्र मुख में वंशी लगाये सारङ्ग राग से तान छेड़ते हुए उसी पूर्णमासी की रात्रि को वृन्दावन में जाकर कामोत्पादक मधुर स्वर से वंशी को ऐसा बजाया कि जड़ और चेतन काम के वेग में गोते खाने लगे। उसी समय गोपियों का शरीर धारण करने वाली देवाङ्गनायें पति पिता आदि के निषेध करने पर भी वंशी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के शब्द से काम पीड़ित हो भगवान् कृष्ण के पास वृन्दावन में पहुँच गईं। आई हुई गोपियों की कुशलता और आने का कारण पूछ कर कहा कि—

(भागवत स्कन्ध १० अध्याय २६)

भर्तुः सुश्रूषणं, स्त्रीणां परोधर्मो ह्यमायया ।
तद् बन्धूनां च कल्याण्यः प्रजानां चानुपोषणम् ॥२४
दुःशीलो दुर्भगो वृद्धो जडो रोग्यधनोऽपिवा ।
पतिःस्त्रीभि र्न हातव्यो लोकेप्सुरभिपातिकी ॥२५

पति की सेवा करना स्त्रियों का परम धर्म है, इसी प्रकार पति के माता पिता की सुश्रूषा और बच्चों का पालन करना ये भी स्त्रियों का धर्म है। दुःशील, दुर्भाग्य, वृद्ध, रोगी, निर्धन, मूर्ख ऐसा पति भी उन स्त्रियों के अनादर करने योग्य नहीं है। जो स्त्री अपनी उत्तम गति चाहती हैं। वह स्त्री केवल पतित पति को त्याग सकती है। भगवान् के इस पुनीत उपदेश को सुनकर काम का वेग ठण्डा होगया। और गोपियों की मानसिक बृत्तियाँ ब्रह्म की तरफ झुक पड़ीं ब्रह्म रूपिणी वृज नारियाँ नीचे को चन्द्र मुख झुकाये चरणाङ्गुष्ठ से भूमि खोदती हुईं बोलीं।

मैवं विभो ऽर्हति भवान् गदितुं नृशंसं संत्यज्य सर्वविषयांस्तव पाद मूलम्। भक्ता भजस्व दुरवग्रह मा त्यजास्मान् देवो यथादिपुरुषो भजते मुमुक्षून् ॥

हे व्यापक ? इस प्रकार से आप हमसे क्रूर वाक्य मत कहो हम समस्त विषयों को छोड़कर आपके चरणारविन्दों में प्राप्त हुई हैं। हम आपकी भक्त हैं। इस कारण हमको मत छोड़ो। जिस प्रकार आदि पुरुष ब्रह्म आप मुमुक्षु जीवों को अपनी दया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का पात्र बनाते हैं। उसी प्रकार आप हमको अपनी दया की अधिकारिणीं बनावें चरण से जमीन खोदने का भाव यह है। कि मानो गोपियाँ कहती हैं कि हे बृज भूषण ? यह न मान लीजिये कि यह हमारी आपकी कथा यहीं समाप्त हो जायगी। यह कथा लिखी भी जायगी और पुस्तकाकार हो इन चरित्रों को सर्वदा के लिये भूमि में निवास करेगी हम लोंगो के लौट जाने से आपकी अकीर्ति होगी। क्योंकि कामदेव समझ लेगा ! कि इन्होंने मेरे डर से ही हाथ में आये हुये गोपिका रूप शस्त्रों को फेंक दिया है। इस बात को भगवान् कृष्ण चन्द्र आनन्द कन्द ने समझ कर तथा नेत्र कमलों की दया दृष्टि से सिंचन कर विरह ताप को बुझा दिया, काम का पराजय तो पातिव्रत धर्म के सुनते ही हो गया, तो भी बचे खुचे कामदेव के घमण्ड को चूर्ण करने के लिये अन्तिम शस्त्र भगवान् ने लेकर रास लीला का आरम्भ किया इस रास क्रीड़ा में हँसी मसकरी, कटाक्ष, से व गोपियों के अङ्गों को स्पर्श से कृष्ण ने कामदेव को उभाड़ना चाहा किन्तु गोपियों के अन्तःकरण में भक्ति की भागीरथी बह गई। अब कामदेव को अवकाश कहाँ, क्योंकि भगवान् कृष्ण के मन में काम भावना थी ही नहीं, गोपियों के मन में जो काम भावना थी वह भक्ति के रूप में बदल गई फिर व्यभिचार कैसा सब फूलों के बाण निष्फल हो गये। इधर छैः महीने की उजेली रात में भगवान् कृष्ण ने अनके प्रकार की रास लीला करते हुये कामदेव को विजय करने के लिये कामदेव की शस्त्र रूपिणी गोपियों के शरीर में अनेक प्रकार का संघर्ष किया, परन्तु कामदेव न जगा गोपियाँ उसी ब्रह्म भाव में लीन होती हुई कृष्ण जी के चरणादि का बारम्बार स्पर्श करके भक्ति योग की अन्तिम सीमा में पहुँच गईं। युद्ध करते २ कामदेव अन्धा हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गया। जब कामदेव ने अन्तिम बाण मारा। तो भगवान् ने राधिका मात्र को साथ में लेकर रफू चक्कर हो गए इतने में कामदेव ने बची खुची कला कौशल लगाया। किन्तु वह भी वृथा हुई भगवान् कृष्ण राधिका जी छोड़ अन्तर्ध्यान हो गए। तब हताश होकर राधिका जी के पास जाय बोला कि हे राधिके ! कृष्ण महाराज कहाँ हैं हम उनसे विना माफी माँगे न जायँगे। क्योंकि हमने परब्रह्म सम्पूर्ण कलाओं से प्रगट भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी से जो कि कामदेव के भी कामदेव हैं। उनसे युद्ध किया मुझे अपराध के कारण गिरफदारी का भय है ऐसा कहते ही भगवान् प्रगट हो गए। हाथ जोड़ कर कामदेव बोला कि मैं आपके शरण हूँ। अपराध क्षमा किये जायँ ऐसे दीन बचन सुनकर भगवान् ने अभय दान देकर कहा हे कामदेव ! जो तुम मेरे सच्चिदानन्द स्वरूप को गिराने के लिये अनेक युवती गोपियों के बीच में परीक्षा लिया। तोभी मेरा स्वरूप अच्युत ही बना रहा कोई विकार न तो गोपियों के शरीर में पैदा हुए मेरे स्वरूप में तो पैदा ही कैसे हो सकते हैं। तुम कुछ दिन प्रतीक्षा और करो कलियुग आने वाला है उसमें जैनियों के यहाँ तुम्हारी सब इच्छायें पूरी हो जायँगी। वे लोग तुमको खुशी के साथ आदर से बुला लेंगे क्योंकि मैंने—जैनियों के आदि पुरुष मेरी माया से पैदा हुये अरिहन् को यह आज्ञा प्रथम से ही प्रदान कर रक्खी है। इतनी आज्ञा पाय कामदेव चला गया भगवान् ने रासलीला समाप्त की, गोपिकाओं का हृदय शुद्ध था तभी तो उन्होंने भगवत् शरणागति का आश्रय लिया उनमें काम क्रोध आदि विकार न थे। गोपिकायें ही पराप्रकृति अनेक तथा एक मूर्तियाँ थीं। उनमें जैनियों की दृष्टि का दोष मात्र है गोपिकाओं में यदि काम विकार होता तो मथुरा कोई दूर न थी। वहाँ चली

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जातीं कृष्ण जी महाराज के ऊपर झूंठा कलङ्क लगाने का दण्ड तुम लोगों के मस्तक ही में मढ़ा गया। तुम लोग उसी के अधिकारी हो।

हरिः ॐ तत्सत

"चीर हरण का मुख्य उद्देश्य"

चीर हरण की कथा को भागवत में यदि टोडरमल्ल जी पढ़ते तो उनको यह संदेह न होता। चीरहरण की कथा इस प्रकार है। गोपियों ने स्वर्ग में देव शरीरों को छोड़ भगवान् की भक्ति करने के लिए वृन्दावन में आकर भगवान् की प्रतीक्षा करने लगीं। परब्रह्म भगवान् कृष्ण के पैदा होते ही स्वतः जेल के दरवाजों का खुलना रात हीं रात वसुदेव का अथाह यमुना पार कर गोकुल में आना लौटते हुए फिर भी जेल का उसी रूप से होकर बन्द हो जाना पूतना, शकटा सुर, इत्यादि बली राक्षसों को साल पूरे होने के पहिले ही मारने से परब्रह्म की शक्ति को निश्चय कर कृष्ण की प्राप्ति का उद्योग करने लगीं भगवती कात्यायनी देवी का व्रत पूजन आरम्भ किया भागवत में लिखा है कि।

हेमन्ते प्रथमे मासि नन्दवृजकुमारिकाः ! चेरु
हर्विष्यं भुञ्जानाः कात्यायन्यर्चनव्रतम् ॥

हेमन्त के प्रथम मास में नन्द के बृज की कन्यायें हविष्य भोजन करती हुईं कात्यायनी का व्रत पूजन करने लगीं अन्त में गोपियाँ प्रार्थना करतीं थीं कि—

नन्द गोप सुतंदेवि ? पतिं मे कुरुते नमः

हे देवि ? मैं तुझे प्रणाम करती हूं। तू नन्द गोप के पुत्र को मेरा पती कर। इस कर्म को नित्य करते देख श्री कृष्ण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भगवान् के चित्त की वृत्ति भक्तियोग से गोपियों की तरफ खिंची उस समय भगवान् कृष्ण ने विचारा कि इनके कर्म फल में नग्न होकर स्नान करना ही प्रति बन्धक है। नग्न होकर स्नान करना सनातन धर्म नहीं है। वर्तमान समय में भी पंजाब कुरु-जाङ्गल, मरु स्थल आदि देशों में अब भी यह कुप्रथा देखने में आती है। इसी प्रकार उस समय वृज में भी थी भगवान् ने उन गोपियों का प्रबल अनुराग देखकर यह उचित समझा कि इस परिपाटी को हटा दिया जाय ये भोली भाली गोपियाँ इसको नहीं जानती थीं। कि ये कार्य निन्दनीय हैं। भगवान् वहाँ आये और गोपियों के वस्त्र लेकर कदम पर चढ़ गये उन गोपियों ने बहुत प्रार्थना की कि हमारे वस्त्र देदो तो भगवान् ने कहा--

भागवत् १० दशम स्कंध चीरहरण अ० २२

यूयं विवस्त्रा यदपो धृत व्रता व्यगाहतैतत्तदु देव हेलनम्। वध्वांजलिं मूर्ध्न्यपनुत्तयें ऽहसः कृत्वा नमो ऽधो वसनं प्रगृह्यताम् ॥

व्रत करने वाली तुम जल में नग्न न्हिड़ो हो तुमने जल देव का अनादर किया है। अतएव तुम दोनों हाथों की अंजली बाँधकर मस्तक पर रख अपने पाप के प्रायश्चित्त में सूर्य भगवान् को प्रणाम करो और अपने वस्त्र ले जाओ। इन जैनी महाशयों से यदि पूछा जाय कि गोपियों को जो नग्न स्नान का निषेध किया यह भला किया या बुरा यदि यह कहें कि अच्छा किया किन्तु नग्न कराके प्रणाम क्यों कराया तब मैं पूछता हूँ कि बुरे काम का प्रायश्चित करवा देना अच्छा है या बुरा यदि यह कहें कि यह सब तो ठीक है किन्तु श्री कृष्ण ने गोपियों को नग्न क्यों देखा इस पर उत्तर यह है। कि अब तक भाई बन्धु गाँववासी आदि सभी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गोपियों को नग्न देखते थे। इस पर शंका न कर महाराज कृष्ण के दण्ड देने के लिये उस चीर हरण में नग्न दर्शन को मिथ्या कलङ्कित दृष्टि से जैनी देखते हैं। हम और आप अपनी छोटी २ पुत्रियों या पड़ोसियों की कन्याओं को रोज नग्न देखते हैं। यदि कहो कि हम काम भावना से नहीं देखते कृष्ण गोपियों को काम भावना से देखते थे। सो यह विषय पूर्वोक्त रास लीला से व कात्यायनी देवी के व्रत से शङ्का का स्थान ही नहीं रखता बल्कि परब्रह्म कृष्ण में भक्तियोग के कारण सच्चिदानन्द का पूर्ण द्योतक है ऐसे ईश्वर कृष्ण के उत्तम चरित्रों में मन से तरंग उठा कर अपने मस्तक झूँठे कलङ्क का बोझा रख देना ही जैनियों की सत्यता है। इनसे यह पूछो कि तुम कृष्ण को मनुष्य मानते हो कि ब्रह्म यदि मनुष्य मानते हो तो इनसे कहो कि क्या आपने किसी वैद्य हकीम से पूछा है कि क्या ३ मास का बालक भयंकर शरीर वाली पूतना इत्यादि राक्षसी को केवल दूध पीने मात्र से प्राण को कैसे खींच सकता है, ६ वर्ष वाले बच्चे के भोगादि ज्ञानोत्पादक मानसिक भावनायें कैसे उत्पन्न हो सकती हैं। भगवान् कृष्ण ने ६ वर्ष की उम्र में चीरहरण किया और सप्तम वर्ष में गोवर्द्धन उठाया यदि वे कहें कि हम तो ब्रह्म मानते हैं। तो इन बुद्धि शत्रुओं से पूछो कि ब्रह्म तो सर्वदा सब के सब अंगों को देख ही रहा है। फिर पूर्वोक्त शङ्का कैसी। यदि प्रजा कोई अन्याय करे तो राजा का धर्म है कि दण्ड देकर उसकी कुरीति को दूर कर वेद शास्त्र की रीति पर ले आवे यही चीर हरण का मुख्य उद्देश्य हुआ। हरिः ॐ तत्सत्—

रामावतार

त्रेता में चक्रवर्ती महाराज दशरथ को जब ६०००० वर्ष व्यतीत हो गये तब पितृ ऋण से वञ्चित हो त्रिकाल दर्शी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वशिष्ठादि महामुनियों द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ कर पूर्व जन्म की तपस्या से, भगवान् परब्रह्म विष्णु को पुत्र स्वरूप में अपने गृह में प्राप्त किया।

यह सिद्धान्त जिस वाल्मीकीय रामायण से मल्लजी को रामावतार का समाचार मालूम हुआ है उसी वाल्मीकीय रामायण से सर्व शक्तिमान ईश्वर का अवतार महाराज दशरथ के यहाँ सिद्ध होता है। भगवान् का चतुर्भुज स्वरूप से पैदा होना जन्म से लेकर परम वैकुण्ठ यात्रा तक अयोध्या पुरी की स्थिति से लोक से अकरणीय चरित्र से ईश्वरत्व स्वतः सिद्ध है। विराध राक्षस को फाँसी दण्ड देकर उसी के मुख से प्रत्यक्ष स्वर्ग जाते समय शवरी का समाचार भगवान् से कहना भगवान् का लङ्का विजय कर लौटते समय लक्ष्मी सीता जी के पतिव्रत धर्म को स्वयं ब्रह्मादि देवताओं के द्वारा आकाश मार्ग से निर्दोष सावित करना व दिव्य ज्वाला वाली अग्नि का सीता जी को अपनी गोद में लेकर महाराज रामचन्द्र जी के सामने निर्दोष कहते हुए निवेदन करना लङ्का में सीता जी को निवास करते हुए लङ्का का अन्न जल भी ग्रहण न करना व किसी वेद वक्ता ब्राह्मण के पुत्र का मर जाना उसके बाद रामचन्द्र जी महाराज का स्वयं राजा का दोष मानकर दक्षिण दिशा में जाकर अधर्मी शम्बूक शूद्र को फाँसी का दण्ड दे ब्राह्मण के पुत्र को जिलवाय देना गौतम की स्त्री शिलारूप अहिल्या को चरण स्पर्श से दिव्य तेजोमय ब्रह्मानन्द पद दे देना। इत्यादि विचित्र मनुष्य से त्रिकाल में भी अकरणीय भगवत् चरित्र को ईश्वर का ही पूर्णावतार स्वरूप अवश्य माना गया है। यह बात वेद वेदान्त पुराण इतिहास व लोक युक्ति इत्यादि सभी ईश्वरावतार रामकृष्णादि को अच्छी तरह से सिद्ध कर रहे हैं। जिसको देशी विदेशी पक्षपात से शून्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सभी विद्वान् सनातन धर्म के गूढ़ विशाल रहस्य को जानकर ईश्वर के अवतार को भारतीय हिन्दू विद्वानों के सामने हर्षपूर्वक स्वयं सिद्ध करते हैं। महाराज रामचन्द्र जी का वैकुण्ठ के जाने का समय वाल्मीकीय रामायण का उत्तर कांड अन्तिम सर्ग यह बात स्पष्ट रूप से सिद्ध करता है कि रामचन्द्र जी महाराज साक्षात् ईश्वर का अवतार थे। रामचन्द्र जी महाराज अपनी दोनों शक्ति भरत शत्रुघ्न के सहित व शरीर के सहित दिव्य तेज विष्णु रूप में ब्रह्मादि देवताओं के देखते २ लीन हो गए। यह चरित्र रामचन्द्र जी महाराज से अतिरिक्त कहीं भी किसी जैनादि पंथ के पुरुषों में स्वप्न में भी नहीं सिद्ध हो सकता। रामचन्द्र जी महाराज ने पुत्र का क्या धर्म है राजनीति किसको कहते हैं। व आश्रम धर्म, वर्ण धर्म किसको कहते हैं। यह अपने शरीर से आचरण कर जीवों को उपदेश दिया। क्योंकि गीता में सनातन ईश्वर ने कहा भी है कि—

यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।

जो जो श्रेष्ठ पुरुष आचारण करता है। वही २ प्रजा भी करती है इसी सनातन सिद्धान्त को ईश्वर रामावतार के स्वयं करने से आज अनन्त अनादि सनातन हिन्दू विश्व धर्म वर्तमान है। और ईश्वर के रामादि अवतारों ने ही इस पवित्र देश का नाम हिन्दुस्थान व भारत आर्यावर्त नित्य बना रक्खा है। इस देश का राजा कोई भी हो परन्तु नाम हिन्दुस्थान ही रहता है। धर्म ही एक ऐसी वस्तु है। जो सर्वदा बड़े विस्तार रूप से तीनों काल में मौजूद रहती है। और वही सनातन धर्म जिस देश में होगा उसका नाम करण ईश्वर के सनातन होने से हमेशा रहेगा। जिस अपराध का दण्ड विचार शून्य राजा नहीं देता उस अपराध का दण्ड ईश्वर देता है। अब रामावतार के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय में विशाल ईश्वर का स्वरूप देखना हो वह वाल्मीकीय रामायण इत्यादि सनातनी इतिहासों में देखलें।

हरिः ॐ तत्सत्

"सती धर्म का भारत में सनातन से सिद्धि के शास्त्रों में अनेक प्रमाण वर्तमान व कलियुग में भी सती देवियों के प्रत्यक्ष दर्शन"

मल्ल जी ने सती धर्म को व्यर्थ जो समझ लिया है। वह उनका सिद्धान्त ही है क्योंकि उनके यहाँ—

ऋषीणां दारान् रममाणानाम्

यह स्त्रियों के लिए जिन ऋषि मुनियों के साथ दुर्व्यहार धर्म माना गया है। वह दुर्व्यवहारी ऐसे पतिव्रतधर्म को कैसे अच्छी दृष्टि से देख सकते हैं। हिन्दू सनातन धर्म में पतिव्रत धर्म से स्त्री देवियों के लिए अग्नि का ठण्डा रूप हो जाना यह प्रत्यक्ष धर्म किसी भी पंथ में स्वप्न में भी असम्भव है। हम एक उदाहरण सती देवी का श्रोताओं के लिये आगे रखते है—एक अग्निहोत्री जी रात्रि को कहीं गये थे। वह प्रातःकाल घर आए शौच से निवृत्त स्नान संध्यादि कर स्त्री के सहित बैठकर अग्निहोत्र किया इसके बाद वहीं पर स्त्री की जाँघ पर शिर धर कर सो गए इनका एक दश महीने का बच्चा घुटने के बल से चलता हुआ अग्नि कुण्ड के पास जा पहुँचा वह गिरना ही चाहता था, कि इतने में माँ की दृष्टि बच्चे के ऊपर गई माँ यदि बच्चे को बचाती है। तो पति की आँख कच्ची नींद में खुलकर पति को दुःख होगा यदि उठती नहीं तो बच्चा आज समाप्त होता है। स्त्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस पर विचार करने लगी विचार द्वारा इस सिद्धान्त पर पहुँची कि—

अप्रियं नैव कर्त्तव्य पत्युः पत्न्याः कदाचन ।

स्त्री कभी भी अपने पति का अप्रिय न करै। इस मनु के लेख को अपना कर्त्तव्य समझकर स्त्री चुप रह गई। लड़का सच्ची पतिव्रता स्त्री का है। और अग्नि में गिर रहा है इस घटना को देख अग्नि घबराया इसके ऊपर कोई कवि लिखता है कि—

सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामास पतिं पतिव्रता ।
पतिवृता शापभयेन पीडितो हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥

अग्नि में गिरते हुए लड़के को देखकर भी पतिव्रता स्त्री ने पति को नहीं जगने दिया पतिव्रता के शाप के भय से घबड़ाई अग्नि अपनी ज्वलन शक्ति को शीतल कर दिया। कि मानो घिसा हुआ शीतल चन्दन है। ऐ जैनियो ? सती देवियों के ऐसे प्रत्यक्षवाद को भी न मान कर मिथ्या ढपली बजाना है। अभी कलियुग में भी पन्ना अजयगढ़ रीवा इत्यादि राज्यों मे सती हो गई हैं। और पार्वती का चरित्र सती रूप दक्ष प्रजापति के यज्ञ में किसी विद्वान् से छिपा नहीं है। ठीक है अन्धे के सामने शीशा क्या करेगा।

हरिः ॐ तत्सत्

'ईश्वरीय बड़ी जेल'

यह बात प्रायः सब को अच्छी तरह से मालूम ही है। कि जिन पापों का दण्ड छोटे राजाओं से लेकर बड़े राजा तक नहीं दे सकते व अन्याय करते हैं। उनका ठीक न्याय साक्षात् ईश्वरीय बड़े न्यायालय में होता है। ईश्वर के असंख्य नौकर जीवों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के गुप्तागुप्त पापों के दण्ड के लिये प्राणान्त समय में ले जाते हैं। वह सबको देखते हैं उनको कोई नहीं देखता-ईश्वरीय ज्ञान वेद रूप दिव्य नेत्र जैनियों के न होने के कारण नित्यत्रिपाद्-विभूति व ईश्वरीय न्यायालय उनके चर्म नेत्रज प्रत्यक्ष अनुमान से बहुत ही दूर हैं। वर्तमान समय में भी यह सब अनुभव कर रहे हैं कि जहाँ प्रत्यक्ष अनुमान की गति भी है। उन देश विदेशों से केवल तार टेलीफोंन रेडियो समाचार पत्रों द्वारा शब्द प्रमाण से ही इण्डिया में समाचार आते हैं। जब कि इन थोड़े ही दूर देशों में प्रत्यक्ष अनुमान कामयाबीं नहीं है। तब

'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह'

इस वेद सर्वज्ञानमय: सिद्धांत से मन के भी अगोचर ब्रह्मानन्द वैकुण्ठ में व ईश्वरीय न्यायालय में कैसे कामयाबी हो सकते हैं। इसलिये अज्ञान सूत्र गुम्फित प्रत्यक्ष अनुमानवादी जैनी-अखिल धर्ममूल सर्वज्ञ ज्ञानमय प्रत्यक्ष अनुमान के भी मूल कारण वेद को न मानने से राजविद्रोही होते हुये यमराज पुरी के अधिकारी अवश्यमेव हैं। अपराधी यदि कहे कि मैं जेल का अधिकारी नहीं हूँ। तो क्या उसके कहने से राजा दण्ड न देगा—अवश्य देगा तद्वत् ईश्वर भी जैनियों के इन्कार होने पर भी यमराजपुरी में नौकरों द्वारा ले जाते हैं जैनियों का संसार तो नित्य है किन्तु परमात्मा अनित्य है।

जैन धर्म में डोंगरे जी फरमाते हैं कि—आत्मायें मुक्त होकर परमात्मा बनती हैं। वह निराकार भी है और बनता भी है। कैसी देवानांप्रियों की मिथ्या गप्प है। अभी तक इनका ईश्वर बनकर तैय्यार नहीं हुआ और न कभी होगा। क्योंकि बहुत सी आत्मायें मुक्त होने को बाकी हैं (संसारस्य नित्यत्वात्)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वह आत्मायें एक होकर परमात्मा बनती हैं व अलग २। यदि एक होतीं हैं तो अद्वैतवाद के उदरवासी जैनी होकर रहेंगे। अलग २ कहोगे तब बहुत परमात्मा बन रहे हैं। यदि न्यूनाधिक्य भाव है। तो ठाकुर व ठाकुरानी से क्यों चिड़ते हैं।

'हरि: ॐ तत्सत्'

निर्गुण और सगुण की मीमांसा का खण्डन"

"मोक्षमार्ग-प्रकाशक पृ० १७१"

निर्गुण, सगुण, जो कि भक्ति के दो भेदों को ग्रंथ कर्ता ने वर्णन किया है। वह बिलकुल असंगत है। जो निर्गुण है। उसकी भक्ति कैसे, निर्गुणवादी अद्वैती वेदान्ती पहले अन्नमय, प्राणमय मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय ये पंचकोशों का अभ्यास करते हुए. अहं ब्रह्मास्मि, इत्यादि वृत्ति का हमेशा चिन्तन कर्मयोग द्वारा करते २ प्रकाश रूप सन्मात्र ब्रह्मानन्द हो जाते हैं। इत्यादि पारमार्थिक निर्गुण ब्रह्मवाद अद्वैत सिद्धि इत्यादि ग्रन्थों में कहे हुए अद्वैत सिद्धांत को न समझ कर मनमाना अद्वैत सिद्धांत, मानकर इस ग्रन्थ के एक सौ ४० पृ० से १४५ तक स्वप्न की तरह मिथ्या बकवाद किया है। एक ही अद्वैत सिद्धांत को बार बार अनेक मत कह कर पुनरुक्ति दोष से मिला हुआ १७६ से १८३ तक कहा है। इसका विचार हम आगे करेंगे तुम्हारी दृष्टि कलंकित होने से सगुण भक्ति वाद से ईर्ष्या पैदा करते हो जैसे कोई दरिद्र सर्व सम्पत्तिशाली लक्ष्मी पति से करता है। जिस भक्ति योग को तुम ठाकुर ठकुरानी शब्द से व विषय भोग की दृष्टि से देखते हो सो तुम्हारी भूल है वह तो सर्व काम परिपूर्ण है। उसी का सब संसार है। उसके लिये कोई विषय भोग कोई चीज ही नहीं है। अपनी वस्तु को ज्ञान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भक्ति के द्वारा अपने सदृश आनन्द मय करने में कोई भी विषय नहीं कहे जा सकते। कर्म वन्धन में पड़े हुये जीव ही अपने स्वरूप को भूलकर विषयासक्त कहे जाते हैं ईश्वर तो सब के कर्म का फल देने वाले हैं सीमा से रहित सम्पूर्ण ज्ञान शक्ति बल वीर्य्य ऐश्वर्य्य तेज से परिपूर्ण होते हुये भी प्रेम पूर्वक मन्दिर में विराजमान होते हुये भक्तों की उपासना से उत्तम २ वस्तु को ग्रहण करते हैं। उससे केवल संतोष मात्र ही है परिपूर्ण तो वह पहले से ही है ऐ जैनियो तुम कलंकित बुद्धि से जिस सगुण भक्ति बाद कों देखते हो उसी से सृष्टि के आरम्भ से बहुत की तादाद में जीव मुक्त होकर ईश्वर के समीप पहुँच गये जिनका इतिहास भारत व विदेशों में भी विद्वानों के कर्ण गोचर हुआ है। जिसको सुन कर तुम वीतरागी ईर्ष्या ही करोगे सगुण भक्ति बाद को जिन ग्रन्थों से तुमने पाया है उन्हीं के अन्दर ठाकुर ठकुरानी ईश्वर व भक्तों का अत्यन्त आश्चर्य युक्त चरित्र है। वह भी तुमको मानना पड़ेगा। अन्यथा उस चरित्र का शास्त्रानुकूल उत्तर न होने पर राज्य विद्रोह के मामले ईश्वर के न्यायालय में दायर हो चुके हैं और होंगे। अब तुम से प्रश्न होता है कि भक्त वर प्रहलाद, द्रौपदी, ध्रुव, गजराज की रक्षा करने के लिये ठाकुर ठकुरानी ने जो शक्ति दिखलायी है। उस शक्ति का अर्थ हमको समझाओ जिस मत के तुम अनुयायी हो उस निरीश्वरवाद के अनुयायी एक बादशाह ने भगवान् विष्णु का नाम स्मरण मन्दिरों में उनकी उपासना से द्वेष व उनके अखण्ड ज्ञान शक्ति बल वीर्य्य ऐश्वर्य्य तेज का भक्तों के द्वारा सुनना सब बन्द करवा दिया। उसके एक पुत्र हुआ पाँच वर्ष की अवस्था में पाठशाले भेजना आरम्भ कर दिया, बादशाह ने पुत्र की परीक्षा एक दिन लिया लड़के से पूछा, कि:—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पप्रच्छ कथ्यतां वत्स मन्यते साधु यद्भवान् ॥

हे वत्स तुम जिसको उत्तम मानते हो वह मुझसे कहो, उसने कहा कि अँधेरा कुआँ रूप जो गृहस्थ है इसको छोड़ कर मैं बन को चला जाऊँ और वहाँ भगवत् का आश्रय लूँ। मैं इसको श्रेष्ठ मानता हूँ। यह सुन कर हिरण्यकश्यपु बादशाह हँस कर बोला यह अवस्था कैसी भोली होती है। कि जो जैसा सिखला दे वैसा कहने लगता है। अच्छा मास्टर साहब ? इस बच्चे को यहाँ से ले जाओ इसको ऐसा पक्का कर दो कि हमको ही ईश्वर समझे ईश्वर और कोई नहीं है, मास्टर साहब बच्चे को ले गये और साम, दाम, भेद, दण्ड से विष्णु की तरफ से मन हटवाया किन्तु लड़का काबू में न आया। तब बादशाह के सामने पेश कर दिया बादशाह ने प्रह्लाद से पूछा कि पाठ सुनाओ, पुत्र ने पाठ सुनाया कि—

श्लोक:—भागवत स्कंध ७ अ० ५

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पाद सेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नव लक्षणा ।
क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीत मुत्तमम् ॥

अर्थ—विष्णु का श्रवण कीर्तन स्मरण पाद सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन इस प्रकार विष्णु में पुरुषों के द्वारा अर्पित जो नव लक्षण दर्शन रूपा भक्ति है। बस इस अध्ययन को श्रेष्ठ मानता हूँ। यह सुन बादशाह को क्रोध आगया और मास्टर से बोला, ऐ अधम क्या यही तुमने लड़के को पढ़ाया है। मास्टर घबड़ा कर बोला कि—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न मत्प्रणीतं न परप्रणीतं सुतो वदत्येष तवेन्द्रशत्रो।
नैसर्गिकीयं मतिरस्य राजन् नियच्छ मन्युं कददाःस्ममानः॥

अर्थ—हे इन्द्र शत्रो ये आपका पुत्र मेरा कहा नहीं करता है। मिथ्या कलंक न लगाओ यह इसकी स्वाभाविक मति है। तब हिरण्यकश्यपु बोला कि रे दुष्ट? तेरी मति कैसे भ्रष्ट हुई, ऐसा सुन कर प्रह्लाद बोले जैसे अंधा से पकड़ा हुआ अंधा मार्ग शून्य रहता है इसी प्रकार ईश्वर को जगत् का कर्ता न मानते हुये अपने आप संसार को बना हुआ मानता है। यह दुष्ट आशय है। बच्चे के इस कथन को सुन नरेश ने दैत्यों को आज्ञा दिया कि इसको मार डालो यह सुन कर प्रह्लाद के ऊपर सूल भालों की वृष्टि होने लगी। बच्चे को थोड़ा भी आघात न पहुँचा; ऐ जैनियो? बताओ कि उन शूल भालों की वृष्टि को कौन रोकता था। सामने प्रत्यक्ष रोकने वाली कोई चीज दिखलाई ही नहीं देती थी पाँच वर्ष के बालक में यह ताकत ही नहीं पाई जाती कि स्वयं ऐसी भीषण आपत्ति से बच जाय यह तो उन्हीं की कृपा है। जो सर्वत्र सूक्ष्म रूप से रहते हुये मंदिरों में मूर्ति रूप से विराजमान होते हुये जैनी ऐसे निन्दकों का दमन कर प्रह्लाद ऐसे वीरों की रक्षा करते हैं। दैत्यों ने दूध संखिया मिला बच्चे को पिला दिया पर बच्चे को कोई असर न हुआ तब जल्लादों को पर्वत से गिराने की आज्ञा दी। प्रह्लाद को ले पर्वत से गिरा दिया। जब शाही दरवाजे पर आये तो क्या देखते हैं। कि लड़का देहली पर खड़ा है। देख कर आश्चर्य हो गये। लड़के से पूछा कि हम तो तुमको पहाड़ से ढकेल आये तुम यहाँ कैसे आये। बच्चा बोला कि नीचे से सीधा रास्ता लगा था इस कारण हम जल्दी आ गये ऐसे पुत्र के शक्तिशाली प्रभाव को सुनकर बादशाह के मन में अनेक प्रकार के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संकल्प उठे। और लड़के को धमकाकर बोला कि आज मैं तुमको मृत्यु के मुँख में पहुँचाता हूँ मेरे क्रोध से तीनों लोक काँपते हैं। तू जरा भी नहीं डरता। तू किसके घमंड में भूला है, इसको सुन कर बालक बोला, कि—

गिरि को उठाय बृज गोप को बचाय लीन्हों,
अनल ते उबार्यो पण बालक माँजारी को।
मोहिं तो भरोसो, एक श्यामले गिरिधारी को,
प्रीति न छुड़ाओ गिरधारी नन्दलाल सो॥

यह सुन बादशाह म्यान से तलवार निकाल कर बोला कि ऐ मन्दभाग्य क्या तुम्हारा राम सर्वत्र है। प्रह्लाद बोला कि है बादशाह बोला क्या इस खम्भे में भी है पुत्र बोला कि है! बादशाह बोला कि वह दिखाता क्यों नहीं इस प्रश्न का उत्तर वेदव्यास जी लिखते हैं कि— भा० अ० स्कं० ८

सत्यं विधातुं निज भृत्य भाषितं व्याप्तिं च भूतेष्व खिलेषु चात्मनः। अदृष्यता त्यद्भुत रूप मुद्वहन् स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम्॥

अर्थ—भक्त की वाणी सच्ची करने को और प्रत्येक परिमाणु में मैं व्यापक हूँ। इसको सत्य करने के लिये खम्भे में एक अद्भुत रूप दिखलाई दिया जो न तो मनुष्य ही है और न शेर ही है। अब क्या था ऐसे भगवन के नृसिंह शरीर को देख कर सब के छक्के छूट गये। प्रह्लाद भगवत् को तुर्त ही दण्डवत् कर स्तुति करने लगे। भगवान् प्रह्लाद के शिर पर हाथ रख कर बोलते हैं। कि प्रह्लाद कहाँ तेरा कोमल शरीर, कहाँ छोटी सी अवस्था कहाँ फिर प्रमादी पिता की दी हुई यातना इस कारण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरे आने में कुछ विलम्ब हुआ ऐसे मधुर भाषण बोलते हुये भक्त राज प्रह्लाद के दुःख को दूर कर सगुण भक्ति बाद को दिखलाया। और ईश्वर को साकार न मानने वालों के कर्णक सन्न बीमारी को दूर किया। इसी प्रकार ध्रुव, अम्बरीष, गजराज, द्रौपदी इत्यादिकों के इतिहास से ईश्वर के सगुण भक्ति का प्रवाह भारत में अनादि काल से सिद्ध है वही सगुण भक्ति का प्रवाह आज भी मौजूद है। और आगे मौजूद रहेगा। इस भक्ति योग के प्रेमी तो हिन्दू ही क्या दूसरे जात वाले भी पाये जाते हैं। जिन्होंने अखंड भक्ति योग से मंदिरों में विराज मान ईश्वर की मूर्ति को अपने पास बुला लिया।

इसका उदाहरण एक इतिहास है कि ताज खाँ नामकी एक बेगम थी यह बेगम विधवा हो गई थी। मुसलमानों में पुनर्विवाह का रिवाज होने पर भी इसने अपना दूसरा विवाह न किया। इसका मन हरदम खुदा की यादगारी में रहता था। बड़े २ अलिम मौलाना नौकर थे। वे दोनों वक्त इसके यहाँ पहुँचते एव खुदा की चर्चा करते थे यह भी खूब ध्यान से सुनती थी किसी दिन एक पंडित जी इसके यहां आ पहुँचे पर्दा गिरवाकर बेगम ने बातचीत की और पूछा कि पंडित जी क्या कभी परवर दिगार से भी मुलाकात हो सकती है। पंडित जी ने कहा कि अगर तेरा प्रेम सच्चा है। तो ईश्वर दौड़े आवेंगे अगर प्रेम बनावटी है तो ईश्वर का पता कहाँ यह कह पंडित जी चले गये। शाम के वक्त जब आलिम आये इसने आलिमों के आगे यही प्रस्ताव रक्खा कि हमको खुदा के दर्शन कराओ ऐसा सुन आलिम घबड़ा गये मन में सोचने लगे। कि खुदा न ठहरा किसी काश्तकार का बैल जिसको बेगम के सामने लाकर खड़ा कर दें। एक वृद्ध आलिम ने सब की तरफ से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जवाब दिया कि बीवी ! खुदा यहां नहीं मिलते काफे शरीफ में मिलते हैं। वहां का जाना बड़ा कठिन है। ज्यादा रुपया चाहिये। बीवी साहबा को सच्ची लगन थी आलिमों को हुक्म दिया कि प्रातःकाल काफे शरीफ को कूच हो चलें खजाना साथ में चलेगा। अपने २ घर खर्च के लिये अधिक से अधिक रुपया ले जाओ। आलिम बहुत खुशी हुये नगर से काफे शरीफ को कूँच हुये। रास्ते में प्रातःकाल वृन्दावन का पड़ाव हुआ, बीवी पलंग पर बैठी थी जै राधेश्याम, राधा कृष्णा, श्यामा श्याम जै यमुना मइया की प्रभृति शब्द सुनाई दिये एवं शङ्ख झालर नगारे आदि के अनेक शब्द कर्ण गोचर हुये आलिमों से बोली बड़ा शोर गुल है। मामला क्या है एक आलिम बोला कि बीवी यह हिन्दुओं के खुदा की नगरी है। बेगम ने कहा क्या यहाँ हिन्दुओं का खुदा रहता है। आलिम बोला जी हाँ, बीवी बोली चलो हिन्दुओं के खुदा से मुलाकात करें। आलिम बोला यह खुदा तो सिर्फ हिन्दुओं का खुदा है यह छोटा खुदा है, इससे क्या मुलाकात करना है काफे शरीफ चलते ही हैं। वहाँ तमाम मखलूक के मालिक बड़े खुदा से मुलाकात होगी। बेगम ने कहा इससे भी जरूर मुलाकात करो। शायद यह हमारी सिफारिश कर दे तो बड़ा खुदा जल्द मिल जावे। आलिम ने कहा इस खुदा के आगे जाना इस्लाम शरह के खिलाफ है। बीवी ने कहा कि प्रेम में कोई शरह नहीं यह कह कर बीवी अकेले ही मन्दिर की तरफ चली। चलते चलते २ एक मन्दिर मिला सैकड़ों मनुष्य आते जाते थे। यह भी सीढ़ी चढ़ कर ऊपर के दरवाजे में पहुँची बेगम ने पूजारी को बुलवाया और पूछा मैं मन्दिर में चली जाऊँ तो क्या हानि, पूजारी ने कहा हमको भगवान् की फिर प्रतिष्ठा करवानी होगी। पचास हजार रुपये लगेंगे बीवी ने कहा दश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लाख रुपये ले लो, पूजारी ने कहा कि आप करोड़ों रुपया देने पर भी मन्दिर में नहीं जा सकतीं। यह नीचे उतर आई और मन्दिर के सामने यह कह कर बैठ गई कि।

बैठी हूँ तेरे द्वार पर कुछ करके उँठूगी।
या वस्ल ही हो जायगा या मर के उठूंगी।

यह भूँखी प्यासी कई रोज बैठी रही एक रोज आधी रात के समय प्यास के मारे प्राण निकलने लगे। उस दशा में इसने पुकार लगाई।

सुनिये दिलजानी मेरे दिल की कहानी,
तेरे हाथ हूँ बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं"।
नन्द के कुमार कुरवान तेरी सूरत पर,
हूँ तो मुसलमानी हिन्दवानी हो रहूँगी मैं।

यह कह कर मूर्छा होकर बेहोश गिर गई। होश आने पर खड़ी होकर प्रार्थना किया कि

अल्ला मिसमिल्ला रहिमान और रहीम छोड़,
पीर और शहीदों की चर्चा न चलाऊँगी।
सूथना उतार पहिन घाघरा घुमावदार,
फरिया को फार शीशचूनरी चढ़ाऊँगी॥
कहत शाहजादी ठाकुर कवि सों पैज कर,
वृन्दावन छोड़ अब कितहूँ न जाऊँगी।
बाँदी बनूंगी महा राधा रानी जू की,
तुर्किनी बहाय नाम गोपिका कहाऊँगी॥

प्रार्थना करने के बाद क्या देखती है कि मन्दिर के किवाड़ खुल गये। पीत वस्त्र पहने मुकुट लगाये डुपट्टा जिन का जमीन में लटक रहा है। बन्शी को काँख में दबाये भगवान् श्रीकृष्ण भागे चले आते हैं। भगवान् ने बेगम को छाती से लगाया और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहा कि तुम्हारी हमने कठोर परीक्षा लिया है। बीबी का भव-बन्धन छूट गया और वह मोक्ष को चली गई। बोलो वृन्दावन श्री कृष्णचन्द्र की जय।

"मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १८६ में टोड़र-मल्ल जी के सांख्य सिद्धान्त में कहे हुये माया जाल का निराकरण"

टोड़रमल्ल महाशय ने सांख्य मत को अपने अज्ञान साँचे में ढाला है। साँख्य तत्व कौमुदी सर्व दर्शन संग्रह इत्यादि ग्रंथों में वर्णित है। यहाँ ग्रन्थ के विस्तार भय से नहीं लिखा जाता है। तन् मात्रा ग्रन्थकार ने सोलह लिखों हैं। सो गलत है। तन्मात्रा पाँच ही हैं रजोगुणादि आश्रय प्रकृति ही होती है। चेतन के स्वरूप में प्रकृति के रजोगुणादि संसर्ग वश मालूम होते हैं। नेत्रेन्द्रिय को पृथ्वी द्रव्य कहा है सो गलत है क्योंकि रूप का ग्रहण प्रकाश के बिना नहीं होता इसलिये नेत्रेन्द्रिय तैजस द्रव्य है वाह रे? प्रत्यक्षवादी टोड़र मल्ल धन्य है। तुम्हारी मल्लता को कि आगी को पानी, पानी को आगी कहते हो। इन्द्रियाँ गेरह होती हैं। मल्ल जी सूड़ पूंछ को उन गेरह से अलग कर तेरह की दौड़ लगाते हैं। न मालूम इन्होंने कैसी गिन्ती किया है क्योंकि हाथी के पाँव १ पूंछ २ गुह्य ३ मूत्रेन्द्रिय ४ जिह्वा ५ नेत्र ६ कर्ण ७ रसना ८ त्वक् ९ घ्राण १० मन ११ यही गेरह इन्द्रिय हैं। हाथ का अन्तर्भाव सूंड़ में ही है। क्योंकि सूंड़ तो नासिका है उसीमें जो दो छिद्र है जिससे वायु भीतर बाहर आती जाती है। यद्यपि वह हाथ का भी काम करती है तथापि गणना चाहे घ्राणेन्द्रिय में करो चाहे हाथ में। क्योंकि हाथ में नाक किसी के नहीं होती मल्ल जी शास्त्र का अनादर किया है। इसलिये विपरीत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्धि है। पंच तन्मात्रा से पंचभूत की उत्पत्ति को मल्ल जी मिथ्या कहते हैं। सो इनकी बुद्धि चंडूखाने की मिथ्या गप्प है। शास्त्र के विपरीत ही मल्ल की बुद्धि थी। यदि दधि दुग्ध न्याय मालूम होता तो तन्मात्रा से पंच महाभूत की उत्पत्ति में सन्देह न होता। सूक्ष्म रूप से अग्नि अपने रूप में लीन रहती है। अलग नहीं रहती क्योंकि गुण गुणी का समवाय सम्बन्ध है। उत्पत्ति का अर्थ स्थूल रूप धारण करना है। अग्नि की सूक्ष्मावस्था का नाम ही रूप तन्मात्रा है। न कि रूप से कोई अपूर्व पदार्थ पैदा होता है ऐसे बुद्धि के शत्रु शास्त्र में देवानां प्रिय मल्ल जी सांख्य सिद्धान्त का विचार कैसे कर सकते हैं। सांख्य मतानुयायी अनेक भेष से सिद्धान्त की रक्षा करते हैं। इससे जैनियों के पंथ का भण्डाफोर होता है। इसलिये इनको हिन्दू-शास्त्रों से ईर्ष्या पैदा होती है। उस ईर्ष्या को कागज के घोड़ों से अपने ही घर में दौड़ मचाते हैं। शास्त्रार्थ के मैदान में यह नहीं आ सकते। सनातन धर्म का सिद्धान्त इतना विशाल है कि धर्मानुकूल पुरुष अनेक प्रकार से संसार बन्धन को छोड़ ईश्वर के समीप पहुँच जाते हैं। जैसे घृत अपने कारण दधि रूप परमाणुओं में लीन रहता है उसी प्रकार अग्नि अपनी तनमात्रा रूप में लीन रहती है यह सूक्ष्म रूप से सांख्य शास्त्र कह मल्ल की बुद्धि का परिचय, दिया गया। "इति सांख्य सिद्धांत मन्डनम्"

"नैयायिक मत के निराकरण का खडन

"मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १८९ में (प्रथम ग्रासे मक्षिका पातः) मल्ल जी को हो गया। कि नैयायिक वैशेषिक को शैव मत का भेद लिखा है। सो इससे मल्ल जी को शास्त्र विषय बुद्धि का पता चल गया इसलिये आगे विचार करना अनावश्यक है। क्योंकि आगे १६ पदार्थ नैयायिक के गिनाते प्रयोजन कहते हुये

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मल्ल जी बोल उठे कि आकाश काल कोई वस्तु नहीं—अरे बुद्धि सागर ? पदार्थ शब्द का अर्थ भी मालूम होता तो ऐसा न कहते।

पदजन्यप्रतीतविषयत्वं पदार्थत्वम्

पद को उच्चारण करने से जो ज्ञान हो उसीके विषय को पदार्थ कहते हैं। सो यह लक्षण षोड़श पदार्थों में मिलता है तुमने न्याय शास्त्र देखा ही नहीं इसलिये उसका प्रयोजन तुमको कैसे मालूम हो कोई संसार में ऐसा विद्वान् नहीं हुआ जो न्याय व्याकरण, को इतनी शत्रुता से देखते हुये कुछ भी मुख से उच्चारण कर अपने को विद्वान् कहवाया हो। क्योंकि विद्वान् शब्द का अर्थ ही व्याकरण, न्यायस्वरूप है। व्याकरण न्याय के विना सूत्र की तरह मणियों का स्तम्भन नहीं होता मुख से किसो भी संस्कृत शब्द का उच्चारण (मम मुखे जिह्वानास्ति)।

इस न्याय का भागी होना स्वतः सिद्ध है। न्याय व्याकरण इत्यादि शास्त्र अंगीरूप सर्वज्ञानमय वेद रूप ईश्वर के अंश हैं। यह सब अपनी २ ज्ञान की धारा से जीवों को अंगी रूप ईश्वर के पास पहुँचाते हैं। जैसे शरीर के अन्दर सब इन्द्रियां अपनी २ शक्ति से आत्मा को सुखादि अनुभव कराती हुई एक दूसरे की ज्ञान धारा को नहीं रोकतीं उसी प्रकार शास्त्र भी परस्पर एक दूसरे का आश्रय लेते हुये आत्माओं को मुक्ति का रास्ता वतलाते हैं। नैयायिक अनुमान से जगत् कर्ता यदि ईश्वर को मानता है तो तुम्हारी बुद्धि क्यों अवकुण्ठित है। इस दृश्यमान विविधकारीगरी से युक्त विशाल जगत् को किसने वनाया है। क्योंकि जगत प्रत्यक्ष प्रमाण से ही अनित्य ही प्रत्येक आत्माओं को अनुभव हो रहा है। यदि संसार ऐसे ही हमेशा नित्य है तो जैनियों के मन्दिर गृह क्यों अपने से नहीं वन जाते जैनी तो स्वयं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अग्निरूप हैं। उनके यहाँ से रोशनाई की कुर्की हो जाना चाहिये व उनके मुख में अंगार दे दिया जाय और वे चूँ न करें तब तो अग्नि पृथ्वी तत्व एक हो सकते हैं यह न्याय शास्त्र का सूक्ष्म रूप से विचार और मल्लजी की बुद्धि कंटकता का संहार हुआ।

वैशेषिक मत के निराकरण का खण्डन

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १९२ में टोड़र मल्ल के मस्तक में लीख का टीका पहले ही लग गया। क्योंके मल्ल लिखते हैं। कि बहुरि वैशेषिक मत विषै छै तत्व कहे हैं। अरे बुद्धि कंटक यदि तर्क संग्रह का प्रथम सूत्र भी मालूम होता तो ऐसा न कहते। (द्रव्य गुण कर्म, सामान्य विशेष समवाया भावाः सप्त पदार्थाः) यही तर्क संग्रह का प्रथम सूत्र है। इसमें सात पदार्थ गिनाये गये हैं। मल्ल जी छै ही लिखते हैं एतेच पदार्था वैशेषिके प्रसिद्धाः यह मुक्तावली में गणना किया है। पृथ्वी जल अग्नि के परिमाणु नित्य हैं उनका कार्य रूप पिण्ड अनित्य है। जैसे प्रत्यक्ष घड़ा मकान शरीर नाश होते हैं पुनः उसी मिट्टी से परमाणु पिण्डमय वड़ा मकान वनते हैं। यह संसार स्थूल रूप पञ्चीकरण प्रक्रिया से ईश्वर की इच्छा द्वारा वनता है। पृथ्वी जल तेज वायु आकाश यह पाँच तत्व परस्पर हर एक में मिश्रित हैं कहीं २ न्यूनाधिक्य भाव से एक तत्व दूसरे तत्व से अधिक प्रतीत होता है। इसी प्रकार एक तत्व का गुण दूसरे तत्व में प्रतीत होता है पृथ्वी का असाधारण गुण गन्ध ही है। जल का गुण शीतल स्पर्श ही है तेज का गुण उष्ण स्पर्श ही है। इनके लक्षण तर्क संग्रह मुक्तावली इत्यादि न्याय शास्त्र के ग्रन्थों में विचार रूप से वर्णित है। जैसे—

समवायसम्बन्धावच्छिन्नगन्धात्वावच्छिन्ना धेयता
निरूपिताधिकरणतावत्त्वंपृथिव्यालक्षणम् ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसी प्रकार जलादि के लक्षणदिये गये हैं। मल्लजी पृथिवी के परमाणु को तेज रूप और अग्नि को राख रूप कहते हैं। तो फिर राख रूपी अग्नि से रसोई इत्यादि का काम करोगे कि नहीं यदि जल कहीं भूमि में छोड़ दिया गया। उसके सूखनें से क्या यह साबित हो सकता है कि जल पृथिवी रूप हो गया यह मल्ल जी की भ्रान्ति ही है। अग्नि पृथिवी रूप नहीं होती, किन्तु सूक्ष्म रूप को धारण कर लेती है नहीं तो दियासलाई से आगी निकालो यह प्रयोग तुम्हारे मत में किस तरह ठीक होगा क्योंकि अग्नि तो पृथिवी रूप है। अग्नि प्रत्यक्ष तो है हां नहीं तेज अग्नि तत्व सूक्ष्म रूप से दियासलाई में है न कि अग्नि दिया सलाई है जैनियों के पेट में वैश्वानर अग्नि यदि एक दिन के लिये पृथिवी रूप हो जाय तो फिर जैनियों को अग्नि पृथिवी को एक कहने का भूत उतर जाय। आकाश काल प्रत्यक्ष सिद्ध सत्ता रूप पदार्थ को प्रत्यक्षवादी मल्ल अपदार्थ कहते हैं। सत्ता शब्द का अर्थ व पदार्थ शब्द का अर्थ मालूम ही नहीं है। जिन जलादि तत्व में शैत्य गुणादि नहीं प्रतीत होते उनमें तैजस पदार्थ के संयोग से उद्भूतत्वाभाव ही कारण है। जैसे दुग्ध में घृत प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता बाद में उसी से उद्भूत रूप दिखाई देता है। जिसको खा कर जैनी हट्टे कट्टे हो कर प्रत्यक्ष विरुद्ध नहीं कहते। कहिये मल्ल जी शब्द कितने प्रमाण का किस रंग का है। यदि कहीं तीन टेढ़ का हुआ तो शब्द के उच्चारण करने से जैनियों का कंठ ही फट जायगा। भीति में भी सूक्ष्म रूप से जैसे आकाश है उसी प्रकार से उसका गुण शब्द भी है। क्योंकि मकान के भीतर का शब्द भी सुनाई देता है यदि न भी सुनाई दे तो भीति के सूक्ष्म अन्तराल में उपाधि सहित आकाश की तरह शब्द भी है। मल्ल जी ने क्रिया और क्रियाश्रय का ऐक्यवत्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाकर उत्क्षेपण इत्यादि कर्मों को निषेध किया है। सो तुर्त ही कर्ण पिशाचनी ने पीछा गह लिया कि अब कर्म क्रिया-श्रय एक होने से कर्म यदि फल को देता है तो शरीर का देना स्वतः साबित हो गया, तो अब जैनी अपने सिद्धान्त से स्तीफा दें।

मीमांसा शास्त्र के निराकरण का खण्डन

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १९६ में मीमाँसक मत के दो भेद कह कर बाद में जैमनीय मत कहा है। सो शास्त्र का परिचय ठीक न होना ही कारण है। क्योंकि जैमिनि ऋषि, प्रणीत शास्त्र का नाम मीमाँसा है। यह भट्ट प्रभाकर इत्यादि इसी जैमिनि शास्त्र के प्रकाशक हैं। उनके सिद्धान्त विमल मोक्ष प्राप्ति के उपाय हैं। आत्मा के माया रूपी पर्दा को हटाने वाले एवं परब्रह्मानन्द को पहुँचाने वाले हैं। जिनमें क्रिया आचार अहिंसा करने वाले प्रत्यक्ष देखते यज्ञ के फल रूप स्वर्ग को गये ऐसे सनातन हिन्दू शास्त्रों में अनेक प्रमाण हैं जैमिनि ऋषि ईश्वर और वेद में अभेद मान कर वेद से अलग कोई ईश्वर दूसरा नहीं है। सांख्य शैव नैयायिक वैशेषिक वेदान्ती यह सब अधिकारी भेद से वेद के सिद्धान्त को ही कह रहे हैं। जाना सब को भगवान् के पास ही है किन्तु मार्ग का केवल भेद है। तुम्हारी बुद्धि भ्रान्ति के पर्दों से ढकी है। इसलिये उलटा पलटा देख रहे हो। अग्नि में तिलाहुती देने का ही यह फल है कि चावल व गेहूँ की पैदावारी से जैनी हट्टे कट्टे तन्दुरुस्त बने हैं। यह जगद्गुरु हिन्दू सनातन धर्म की कृपा है। नहीं तो तुम अहिंसा के भूतों से जगत की टें ही कर दो।

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैनियों की वीतरागता का अन्त

ऐ जैनियो ! वेद भगवान् की निन्दा करके भी क्या वीतरागी बनोगे। तुम लोगों से अच्छे तो जड़ पदार्थ हैं। क्योंकि वह परम वीतरागी हैं। तुम्हारे मन्दिर में जिन देव के साथ तुम्हारी योषितों का व्यवहार ही साबित करता है कि जैनमत कुदेव, कुगुरु कुधर्म रूप है। वैदिक सनातन धर्म में तो खुली वीतरागता है। शरीर तो स्वाभाविक किसी का मोटा किसी का पतला होता है। केवल महन्तों का ही मोटा नहीं होती ये लोग सर्वदा भगवत् के कार्य्य को करते हुए पानी में कमल के पत्ते की तरह अलग रहते हैं। भगवत् में तो अत्यन्त राग की आवश्यकता है। और संसार से वीतरागी होना चाहिये तभी मोक्ष होता है। और ईश्वर अपने तुल्य ज्ञान शक्ति बल वीर्य ऐश्वर्य तेज सीमा रहित देता है, केवल जगत् कर्तृत्व शक्ति इत्यादि नहीं देता वह ईश्वरत्व के विशेष लक्षण हैं। यह मुक्त आत्माओं में नहीं हैं।, अन्य सर्व गुण दिव्य अनन्त आनन्द का भोग ईश्वर के तुल्य ही है। सुवर्ण लोहे की बेड़ी रूप पुण्य पाप कर्म बन्धन से मुक्त जीवों का भोग संसारी विषय भोग नहीं है। वह दिव्य व नाश रहित है मन्दिरों में भगवत् की प्रसन्नता के लिये भक्ति करते हुए उत्तम भोग वस्त्रादि ईश्वर को समर्पण करना भक्ति योग का प्रथम अंग है। यद्यपि भगवान् सर्व गुण से परिपूर्ण हैं। तो भी प्रेम पूर्वक भक्तों से समर्पित वस्तु को स्वीकार कर पाते हैं इसके कई प्रत्यक्ष इतिहास हिन्दू शास्त्रों में मौजूद हैं और अभी भी व्येङ्कटेश इत्यादिक क्षेत्रों में ईश्वर ने पूजारी के पूजन से प्रसन्न हो अदालत में जा कर गवाह दिया था। वह दृश्य बहुत ही प्रत्यक्ष ईश्वर का हुआ। भगवान् ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा भी है कि—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस ईश्वर के वचन से भक्ति की दी हुई चीजों को प्रेम पूर्वक ग्रहण करते हैं। ईश्वर एक ही है मुक्त जीवों में केवल आनन्द की समानता है।

भक्तियोग में मल्ल की अज्ञानताका निराकरण

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १८२, १८३ में अनेक प्रकार का मोक्ष कह परस्पर विरोध बतलाया है, सो मल्ल जी की अज्ञता ही है। क्योंकि अद्वैत सिद्धान्त को ही शब्दान्तर से अनेक रूप से दुहराया है सो कार्य कारण भाव न जानने का कारण है। उदाहरण मात्र में भेद है न कि वस्तु स्थिति मोक्ष में। कहीं घटाकाश का उदाहरण कहीं ज्योति स्वरूप का कहीं अन्तःकरण वाच्छिन्न जीव भाव रूप का उदाहरण दिया है। इसको मल्ल जी न समझ कर के मिथ्या बकवाद किया है। मुक्ति चार प्रकार की होती है जिस मुक्ति को जो भक्त चाहता है उस मुक्ति को ईश्वर देतें हैं इस सिद्धान्त को वेद स्वयं कह रहे हैं यथा—

निरंजनः परं साम्य मुपैति मुः ३-२-३ मम साधर्म्यमागताः १-४-२ ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति मुः ३-२-९ लोकेषु विष्णो निंवसन्ति केचित् समीपमीच्छन्तिच केचिदन्ये, अन्येतु रूपं सदृशं भजन्ते सायुज्य मन्ये सतु मोक्ष उक्तः

यही सिद्धान्त जगद्गुरु रामानुजाचार्य जी का है इसमें क्या विरोध है मल्ल जी की अज्ञानता ही कारण है।

शङ्कर जी के लिङ्ग में मल्ल की शंका का निवारण

"मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १६८ में शङ्कर जी के लिंग की निन्दा का खन्डन व मोहनी रूप के दर्शन का वास्तविक स्वरूप" मल्ल जी ने शङ्कर जी के दिव्य लिंङ्ग के विषय में दुष्ट भावना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को प्रगट किया है। क्यों न करें इनके यहाँ तो मन्दिर में साङ्गो पाङ्ग तैय्यार खड़ा ही रहता है। इनकी वीवियों को प्रथम यही पाठ पढ़ाया जाता है। यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध है लिंग शब्द का अर्थ कारण है! यह शिव पुराण में लिंग की उत्पत्ति प्रकरण में लिखा हुआ है। कि ब्रह्मा और भगवान् विष्णु से कुछ सम्वाद हुआ उसी समय चारों तरफ से गोल उतार चढ़ाव अग्नि की ज्वाला ज्योतिरूप शङ्कर जी प्रगट हुये। उन्होंने सम्वाद को शांत किया और ब्रह्मा ने जोतिर्लिङ्ग कह स्तुति किया वही ज्योतिर्लिङ्ग आज जगत् में पूजित हो रहा है। ये अज्ञानी जैनी संसारिक लिंग के समान समझते हैं। अपनी शक्ति को अपने साथ रहने से कोई हानि नहीं। सूर्य्य की कान्ति सूर्य्य के साथ ही रहती है।

यदि तुम अपने समान गृहस्थ समझते हो। तो तुम्हारे मुनि एक तोला संखिया भी पचा जावें। ऐ जैनियो ? तुम भगवान् शङ्कर के स्वरूप को नहीं जानते हो कि जिन्होंने समुद्र से निकले हुये हलाहल विष को पान कर जगत् की रक्षा किया यदि तुम्हारे मुनि आज भी पियें तो सब जैनी रवाना हो जायें, संसार की नित्यता का भूत उतर जाय। शङ्कर जी योगिराज हैं। वे अनेक भेष से रहते हैं। उनकी तुलना व्याघ्र चर्म प्रतिच्छन्नरासभ जैनी कैसे कर सकते हैं। शङ्कर जी प्रलय में अग्नि जल इत्यादि द्वारा सब जीवों के विशेष अधर्म फल दण्ड रूप संहार को करते हैं। जैनियों के मन्दिर में नग्न स्थित जिन देव के लिंग इन्द्रिय को तुम और तुम्हारी औरतें जब समानती हैं। तब घृणा पैदा नहीं होती जिनके यहाँ प्रथम समागम में यही योनि लिंग प्रवेश रूप दुर्व्यवहार ही धर्म माना गया है। इसमें प्रमाण यह है कि:—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मल मय पुद्गल पिंडे सकल जलै रपि की दृशी शुद्धिः।
आत्मा विमल स्वभावः ऋषि परि चरणेन ज्ञातव्यः।
दूरे चरण प्रणामः कृत सतकारंच भोजनं मिष्टम्।
ईर्ष्या मलं न कार्यं ऋषीणां दारान् रम माणानाम् ॥

स्त्रियों से भोग करते हुये ऋषियों से ईर्ष्या न करना चाहिये! इस श्लोक से यह जाहिर होता है कि इनके मन्दिरों में या किसी भी टाइम में अपनी औरतों से रमण करते हुये ऋषियों से ईर्ष्या न करे, अहो धिक्कार है। ऐसे दुव्यवहारी पंथ को कि जिसमें गुरु देव भी सने हैं।

शङ्कर जी का स्त्री में मुग्ध होकर वीर्य गिरना तथा अनेक प्रकार से साधारण अपने जिन की तरह स्त्रियों से भोग करने वाला विषयी कहा है। सो जैनियो की रोज उसी बात की सेवा का फल है यदि शिव पुराण में शङ्कर जी के इस प्रसंग को भली भाँति देखा होता तो अपने अरिहन् की तरह विषयी मानने का मौका न आता, लंका के रावणादि राक्षस जब शङ्कर जी की उपासना से वली हो देवता ऋषि ब्राह्मण को कष्ट देने लगे। तब सब देवताओं ने भगवान् से प्रार्थना किया। भगवान् ने रावणादि वध के लिये भारत में आना स्वीका कर लिया। भगवान् ने देवताओं के चले आने पर विचार किया कि रावण शङ्कर जी की भक्ति से प्रवल वली है। लङ्का में जाने के लिये वैसा ही प्रवल बली हमारा कोई सैनिक हो इस विचार को शङ्कर जी के जानने पर उन्होंने भगवान् के संकल्प को पूरा करने का विचार किया कि जब मेरे ही तुल्य सैनिक हो तब लङ्का जा सकता है। उधर वायु इत्यादि देवताओं को भगवान् की आज्ञा हुई थी। कि तुम लोग वानरी इत्यादियों में अपने तुल्य पुत्र पैदा कर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हमारी सेना बनाओ। वायु भी यह सोचने लगे कि हमारे वेग को स्तम्भक करने वाला किसका वीर्य्य होगा। ऐसा विचार करते कि केशरी इत्यादि बानरों के स्थान में पहुँचे। इधर शङ्कर जी ने भगवान् से यह प्रार्थना किया कि मोहनी रूप में देखना चाहता हूँ। तब सैनिक तैयार होगा। मोहनी रूप के सामने आने पर दिव्य तेजों में सैनिक रूप वीर्य्य गिरा कर सप्तऋषियों को देकर भगवान् की आज्ञा का पालन किया। उसी दिव्य तेजस्वी वीर्य्य को सप्तऋषियों ने किष्किन्धा में जाकर दीक्षा के बहाने अंजनी को दिया। वायु भी प्रसन्न हो अंजनी में ही पुत्र को स्वीकार कर अंजनी को स्पर्श किया जिससे शङ्कर जी का गेरहवां अवतार रूप वायु के पुत्र अंजनी से हनुमान जी रुद्र पैदा हुये। पैदा होते ही त्रिलोक का संहार करने की इच्छा की परन्तु इन्द्रादि देवताओं की प्रार्थना से शान्त हो गये। बाद में रामचंद्र जी महाराज के दर्शन कर लंका जा रावण को दण्ड देकर शिव जी के गेरहवें अवतार का परिचय दिया। ऐसे पवित्र शङ्कर जी के चरित्र को सुन कर पाठकगण समझ जायेंगे कि शङ्कर जी तो वीतरागी हैं जिनके तीसरे नेत्र से कामदेव दग्ध हो आज तक शङ्कर जी के नाम से भयभीत होता है। जिस कामदेव का मय गृहस्थी डेरा जैन मन्दिर है। जिसकी खुजली से व चैतन्यता से जिन देव को वस्त्र पहिनने की फुरसत न होने से नंगे रहने की शरण लेनी पड़ी।

हिन्दू सनातन धर्म ही विश्व धर्म व जगद्गुरु है

अनादि अनन्त तथा सब धर्मों का गुरु है। इसलिये इसका नाम जगद्गुरु सनातन धर्म है। संसार में अनेक धर्म हैं एक धर्म कहता है कि हम वड़े पुराने हैं हमारा नाम पारसी धर्म है हम

जै०—५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लगभग ५००० पाँच हजार वर्ष के वृद्ध हैं हम तुमको मोक्ष देने को तैय्यार हैं। इसके पश्चात् दूसरा धर्म कह उठता है। जिसका नाम चार्वाक है हम तीन हजार वर्ष से मनुष्यों को सुख स्वतन्त्रता उन्नति दे रहे हैं यदि स्वतन्त्रता की इच्छा है तो हमारी शरण आओ।

तीसरा बौद्ध धर्म बोलता है कि तुम लोगों के जाल में मत फसो हमारी शरण आओ हम २५०० वर्ष के हैं चौथा जैन मजहब तनतना रोग से क्षण मात्र सुख भोगने वाला बोल उठा कि हम २२०० वर्ष से इस भारतवर्ष में बड़ी खूबी के साथ मनुष्यों को सुख स्वतन्त्रता के सिंहासन पर बैठा रहे हैं। तुम शरण में क्यों नहीं आते इसी प्रकार ईसाई धर्म १९४० वर्ष का बतलाता है मुसलिम धर्म १३०० वर्ष का कहता है। दयानन्दीय अपने को ५० वर्ष का कहता है। इसी प्रकार छोटे २ और बड़े २ सैकड़ों धर्म अपनी जन्म तिथि का परिचय देते हुये अपने को कुछ वर्षों पहिले होना सिद्ध करते हैं। कहे हुये सभी धर्मों की जन्म तिथियाँ बतलाता हुआ इतिहास यह सिद्ध करता है। कि ये जितने धर्म संसार में प्रचलित हैं। उनमें से एक भी धर्म उस समय का नहीं है। कि जिस समय इस सृष्टि का प्रदुर्भाव हुआ सृष्टि के बहुत दिनों पश्चात् इन धर्मों का प्रदुर्भाव हुआ ये अनादि नहीं हैं। जैन मजहब तो शिव पुराण व श्री मद्भागवत के प्रमाण से २२०० वर्ष का सिद्ध होता है जैन धर्म की उत्पत्ति का रहस्य इस पुस्तक के आदि में वर्णित है उसको प्रेमी लोग प्रेम से पढ़ जैन मजहब की जन्म तिथि को जान जायेंगे समस्त धर्मों का विवेचन तो हो चुका अब जगद्गुरु हिन्दू सनातन धर्म की तरफ चलिये यह किस वर्ष का किस तारीख को पैदा हुआ था। आप इतिहास के पन्ने उलट डालें समस्त ससार में घूम लें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसकी जन्म तिथि का पता आपको न लगेगा पता तो तब लगे जब इसका जन्म हुआ हो जब इसका जन्म नहीं तो फिर खतम कैसे होगा। इसका जन्म नहीं हुआ इस कारण से इसका नाम सनातन धर्म है।

सना भवः सना तनः सना तनश्चासौ धर्मः सनातन धर्मः,

जिसका कभी जन्म और कभी नाश न हो उसका नाम है सनातन, सनातन हो कर जो धर्म हो उस धर्म का नाम सनातन धर्म है। और सनातन ईश्वर का जो धर्म उसका नाम सनातन धर्म है इतिहास इन धर्मों के जन्म दाताओं के नामों को संसार के आगे रख रहा है इतिहास का कथन है कि संसार में जितने धर्म प्रचलित हैं उन सब के नेताओं के नाम मेरे पत्रों में लिखे हैं। जैसे पारसी धर्म का नेता जरतश्त, चार्वाक धर्म का चार्वाक, बौद्ध धर्म का, बुद्ध जैन धर्म का अर्हन्, ईसाई धर्म का ईसा मसीह, मुसलिम धर्म का मुहम्मद, और दयानन्दी धर्म का दयानन्द नेता है जब हम इतिहास से सनातन धर्म के जन्मदाता का नाम पूछते हैं तब इतिहास मौन रह जाता है। क्या इस धर्म को भगवान् कृष्ण चन्द्र जी ने प्रचलित किया था, नहीं २ भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र और उनके पूज्य पिता वसुदेव सनातन धर्मी थे। क्या इस धर्म को भगवान् राम जी ने चलाया था नहीं भगवान् राम जी और उनके पूज्य पिता दशरथ अज रघु ये सनातन धर्म के रक्षक थे सृष्टि के पहिले पहल भगवान् मनु भी सनातन धर्मी थे। इसके नेता का पता नहीं चलता और यह भी बात है, कि संसार में जितने पदार्थ होते हैं उनके स्वामी भी अवश्य होते हैं जिस सम्पत्ति का कोई भी मालिक न हो फिर उसका मालिक कौन, स्वामी रहित सम्पत्ति की मालिक सरकार होती है। संसार में जितने भी धर्म चलें उनके प्रचलित करने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाले स्वामियों के नाम धर्म के साथ लगे किन्तु सनातन धर्म के साथ किसी का नाम नहीं। नाम न होने के कारण तुमको मानना पड़ेगा कि इसके मालिक सरकार जगदीश्वर हैं। प्रलय होने पर समस्त संसार का नाश हो जाता है। केवल एक ईश्वर बांकी बचता है सर्वदा एक रस से ईश्वर ही रहता है। इस कारण ईश्वर का नाम सनातन है और उसके भी धर्म का नाम सनातन धर्म हुआ निरुक्त में लिखा है। कि जब यह जीव गर्भ में आकर गर्भ के कष्ट से पीड़ित होता है तब प्रण करता है कि।

अशुभक्षयकर्तारं फलमुक्तिप्रदायकम् ॥
यदि योन्या प्रमुच्यामि ध्याये ब्रह्म सनातनम् ॥

जो अब की बार गर्भ से बाहर हो जाऊँ तो पापों के नाशक मोक्ष के फल देने वाले सनातन ब्रह्म का ही चिन्तमन करूंगा ब्रह्म सनातन है। इस कारण उसके ज्ञान वेद को भी सनातन के से याद किया गया मनु जी लिखते हैं कि—

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम् ॥
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थ मृग्यजुःसाम लक्षणम् ॥

उस परमात्मा ने यज्ञ की सिद्धि के लिये अग्नि वायु सूर्य इन तीनों तत्वों से। ऋग, यजु, साम लक्षण वाले सनातन वेद मय को दुहा वेद सनातन है इसके ऊपर अथर्व वेद बोलते हैं कि—

सनातनमेव माहु रुताद्यः स्यात् पुनर्णवः ॥
अहो रात्रे विवर्तेते अन्यो अन्यस्य रुपयोः ॥

१०।८ २३ वेदोक्त धर्म सनातन है प्रलय के पश्चात् जब सृष्टि रचना होती है। तब सृष्टि रचना के साथ ही फिर यह संसार में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आता है। उस समय यह नया मालूम होता है। किन्तु वास्तव में यह नया नहीं है जैसे एक दिन रातके बाद दूसरा दिन रात आता है। वह पहले दिन रात की अपेक्षा नया मालूम होता है। किन्तु उसमें किसी प्रकार का भी नूतनपना नहीं है जैन मजहब मनुष्य बुद्धि रचित है मनुष्यों का ज्ञान संकुचित रहने से मजहब भी संकुचित है। जैनी ईश्वर से उपदेश का कोई सम्बन्ध नहीं रखते इसलिये इनका पन्थ कुपन्थ ही है हिन्दू सनातन धर्मी उपदेश का सम्बन्ध साक्षात् ईश्वर से पाया है। इसलिये सनातन धर्म ही ईश्वरीय धर्म है इस सनातन धर्म में वेदों की ११३१ पुस्तकें हैं जो संहिता के नाम से प्रसिद्ध हैं इसके बाद ६ शास्त्र अठारह पुराण व्याकरण साहित्य ज्योतिष १०८ उपनिषद् इतिहास इत्यादि और भी हैं जिनमें हिन्दू धर्म की बड़ी विशालता का वर्णन किया गया है चौरासी लाख योनि में किस २ कर्म के करने से किस २ योनि में जाता है। यह बिस्तृत कानून का विचार है इतनी अधिक पुस्तकें होने पर भी सनातन धर्मी यह मानते हैं कि इन समस्त किताबों में भी ईश्वर का समस्त ज्ञान नहीं है। जितने ईश्वरीय ज्ञान से हमारा कल्याण हो सकता था। उतना ज्ञान हमें इन ग्रंथों में दे दिया शेष ईश्वरीय ज्ञान जिससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं था अपने पास रहने दिया जैनी लोग कहते हैं कि ईश्वर कर्ता नहीं इनसे यदि पूछा जाय कि संसार कैसे बन गया तो चुप हो जाते हैं संसार की रचना से यह मानना पड़ेगा यह संसार किसी अलौकिक परमज्ञानवती शक्ति ने बनाया है। जिसकी बनावट की अद्भुत छवि आकाश मंडल में ग्रहों का घूमना व परस्पर में न टकराना सिद्ध कर देती है उत्कट ज्ञान शक्ति ने बनाया है जैनादि धर्मों ने धर्म के एक भी पूरे अङ्ग को नहीं पकड़ा क्योंकि जगत् की सृष्टि प्रलय रक्षा इनको मानते ही

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं हैं। यही बड़ी भारी इनकी गलती है संसार में चौरासी लाख योनि में जीवों के शरीर का विनाश जन्म प्रत्यक्ष देखने में आता है। इसी प्रकार प्रत्यक्ष सावित होता है—कि बिना ईश्वर का सब जीवों के कर्म फलों का समय २ में देना कैसे हो सकता है यदि कर्म को कहो तो कर्म तो जीव की क्रिया है। वह उसी के आधीन है।

इसको हम विस्तार पूर्वक पूर्व कह आये हैं। इन जैनादि अधूरे धर्मों पर एक दृष्टान्त याद आ गया।

किसी समय एक गाँव में एक हाथी आ गया सब गाँव के मनुष्य हाथी देखने के लिये गये इस गाँव में अन्धों का एक पोषण पालक था। उसमें कई एक अन्धे रहते थे। उन्होंने भी हाथी के देखने की इच्छा प्रगट की कुछ मनुष्यों को दया आई उन्होंने एक २ अन्धे को अपने २ कन्धे पर चढ़ा लिया। और हाथी दिखलाने ले चले हाथी के पास पहुँच एक मनुष्य ने एक अन्धे का हाथ हाथी के कान से लगाकर कहा कि टटोल यह है हाथी, दूसरे ने अपने कन्धे में चढ़े हुये अन्धे को पूंछ पकड़ा कर कहा कि पहिचान यह हाथी है। तीसरे ने सूंड़ चौथे ने दांत पाँचवें ने पैर और छटे ने कमर पर हाथ रखकर हाथी के जानने को कहा वस प्रकार हाथी दिखलाकर इन अन्धों को उनके निवास स्थान पर पहुँचा दिया गया रात्रि में जव दो चार मनुष्य आँखों वाले भी वैठे थे तव अन्धों में हाथी का जिक्र चला एक अन्धे ने पूंछा कि क्यों साहव आप हाथी देख आये अब यह बतलाओ कि हाथी कैसा होता है जिस अन्धे ने हाथी का कान छुआ था। वह वोला हाथी ऐसा होता है कि मानों अनाज पछोरने का सूप दूसरा बोला कि तुमने हाथी देखा ही नहीं हाथी तो ऐसा होता है जैसा मोटा डंडा इसने पूंछ छुई थी। तीसरा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूंड़ छूने वाला बोल उठा कि मालूम नहीं तुम लोग क्या देख आये हाथी तो ऐसा होता है कि जैसा धान कूटने का मोटा मूसर चौथे ने कहा कि तुमने हाथी जाना ही नहीं हाथी ऐसा नहीं होता जैसा तुम बतलाते हो हाथी तो हमने देखा है। हाथी ऐसा होता है मानों चिकनी २ मोगरी इसने दांत पकड़े थे पैर देखने वाला बोला कि तुम्हारी आखें तो फूटीं ही थीं मालूम होता है कि हाथ भी टूट गये थे हमने खूब हाथ फेर कर देखा हाथी ऐसा होता है। जैसा खम्भा हो छटा बोला कि नहीं मालूम तुम क्या देख आये हमने खूब हाथ फेर २ कर देखा हाथी क्या था कण्डों का बिटहा था। इस प्रकार एक दूसरे की बात को न मान कर प्रत्येक अंधा अपनी बात को सत्य करना चाहता था जब विशेष सम्वाद होने लगा तब एक सनातन धर्मी हिन्दू ने कहा कि इन सब अंगों को मिलालो हाथी हो गया जिस प्रकार इन समस्त अङ्गों के मिलाने से हाथी होता है उसी प्रकार अधूरे जैनादि धर्म मिलकर ईश्वरीय सनातन धर्म अनादि अनन्त सिद्ध होता है। इसी लिये जैनादि धर्म अधूरे ही हैं। सब धर्मों का गुरु ईश्वरीय हिन्दू सनातन धर्म ही है।

वेद मन्त्रों में आये हुये अर्हन् शब्द से जैनियों की प्राचीनता का निराकरण व नवीनता की सिद्धि

अब चलिये वेद की तरफ मल्ल जी लिखते हैं। कि ऋग्वेद में हमारे तीर्थंकरों के नाम हैं सो:—

(ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठितान् चतुर्विन्शति तीर्थं करान्)

इत्यादि मन्त्र ऋग्वेद में नहीं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(ॐ नमो अर्हतो ऋषभो)

इत्यादि मन्त्र भी यजुर्वेद में नहीं है। यह केवल मल्ल जी धूर्तता व चण्डूखाने की गप्प है। केवल एक मन्त्र है सो वह भी मल्ल जी ने अशुद्ध लिखा है।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्ध श्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्व वेदाः स्वस्ति न स्ताक्ष्र्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्तिनो बृहस्पति-र्दधातु।

यह मन्त्र शुद्ध है मल्ल जी ने विसर्ग को जैनी कर लिया है इस मन्त्र में अरिष्ट नेमि को तीर्थंकर कहा है सो यह मिथ्या कथन है क्योंकि ऋग्वेद के १-६-१५ में इस मन्त्र की व्याख्या करते हुये अरिष्ट नेमि को तार्क्ष्य का विशेषण कह

अरिष्टनेमिः अरिष्टो अहिंसितो नेमिः आयुधं यस्य यद्वा चक्रस्य धारा नेमिः नेमिर्न हिंस्यते सोऽरिष्टनेमिः एवं भूतः तार्क्ष्यः तृत्तस्य पुत्रो गरुत्मान् नः अस्माकं स्वस्ति अविनाशं विदधातु।

ऐसा भाष्य वेद भाष्यकार ने किया है। न कि मल्ल की तरह तीर्थं करम्, सनातन धर्म का सिद्धान्त यह है कि ईश्वर का वचन ही प्रमाण होता है। कोई २ आचरण भो प्रमाण होते हैं जो कि ईश्वर के वचनानुसार ही हैं क्योंकि वह सर्व शक्तिमान् होने के कारण कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुम् सव समर्थ है। वह जीवों के उपदेश व दण्ड के लिये अवतार धारण कर किसी अवतार में सामान्य वर्ण आश्रम इत्यादि धर्म का अपने शरीर से आचारण करते हुये उपदेश देते हैं। किसी अवतार में विशेष कर्म ज्ञान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भक्ति योग इत्यादि का उपदेश देते हैं अज्ञानी लोग स्वार्थ परायण होते हुये भगवान् के उस दिव्य रूप को न जानते हुये अपने कलुषित हृदय को ही ईश्वर के सामने रख कर चौपट हो जाते हैं। जैसे कि यदि कोई सूर्य अग्नि की शक्ति को न विचार कर उसके ऊपर वृथा दोष लगावे तो अज्ञानता ही होगी जब अपने शरीर के भीतरी स्थान को जानने की शक्ति नहीं है तब त्रिलोकी के इस अद्भुत समाचार को व अणु २ में व्याप्त ईश्वर के सूक्ष्म स्वरूप को कैसे जान सकता है वेद शास्त्रों द्वारा ही उसकी कुछ शक्ति का ज्ञान होगा।

सामान्य धर्म के पालन करने वालों का—

(अपुत्रस्य गतिर्नास्ति)

यह सिद्धान्त है जो कि संसार से विरक्त हुये उनके लिये भगवान् विशेष धर्म भक्ति रूप ही वेद सिद्धान्त है।

(अपुत्रस्य गतिर्नास्ति)

यह सिद्धान्त मोक्ष मार्ग वालों का नहीं है। मुमुक्षु लोग तो पुत्रादिकों को कंटक की समान त्याग देते हैं सनातन धर्मी शास्त्रों में परमार्थिक लौकिक प्रत्यक्ष परम्परया भगवत् प्राप्ति के दो प्रकार के उपाय दो प्रकार के वैदिक अधिकारियों के लिये हैं इस वैदिक सनातन सिद्धान्त के समझ ने की बुद्धि जैनियों के मस्तिष्क में नहीं हैं अन्यथा हिन्दू शास्त्रों में विरोध ही न देख पड़ते चातुर्मास्य व्रत नियम में यह बात नहीं हैं। जैसा मल्ल जी ने भारत का नाम लेकर अपने मजहब की ढफली बजाया है इस प्रकार का चातुर्मास्य व्रत नियम नहीं हैं।

निर्णय सिन्धु इत्यादि धर्म शास्त्रों में चातुर्मास्य व्रत नियम प्रकरण में—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वृथा एकादशीप्रोक्ता वृथा जागरणं हरेः

इत्यादि श्लोक नहीं ही हैं निर्णय सिन्धु चातुर्मास्य व्रत नियम द्वितीय परिच्छेद में देखा गया, वहाँ इनका नाम निशान नहीं है। यह मल्ल जी की झूँठी कल्पना है ये मूर्ख अपने मजहब की बातें हिन्दू धर्म में घुसेड़ते हैं सो कलई खुल गई। जैन धर्म ग्रन्थ में नाथू राम डोंगरे लेखक बुद्धि शत्रु ने वेद मन्त्रों को जैन मत के प्राचीनत्व में प्रमाण दिया है। सो इसकी मूर्खता ही जाहिरात होती है क्योंकि—

न पठेत् यावनीं भाषां प्राणैः कण्ठ गतै रति।
हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज् जैनमन्दिरम्॥

हाथी से रगड़ा हुआ हिन्दू जैन मन्दिर में न जाय हाथी चाहे मार डाले ऐसी वेद शास्त्र आज्ञा देते हैं तब यह डोंगरे जी की मन मानी कल्पना है। डोंगरे ने सब मन्त्रों को अशुद्ध लिखा है और अर्थ तो ऐसा किया है कि जैसे (शुक्लाम्बर धरम्) का किसी मूर्ख ने दही बरा अर्थ किया था। वे अर्थ पूर्वक शुद्ध लिखे जाते हैं।

ऋग्वेद अध्याय २ अ० ७ वर्ग १८ मं० २ सू० ३३

अर्हन् बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन् निष्कं यजतं विश्व रूपम्। अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं नवा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति॥

इस मन्त्र की व्याख्या करते हुये भाष्यकार ने शङ्कर जी की स्तुति परक मन्त्र को माना है।

हे रुद्र त्वं अर्हन् योग्य एवसन् सायकानि शरान् धन्व धनुश्च बिभर्षि धारयसि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यथा—

अर्थ—हे रुद्र तुम यजमान की रक्षा के समर्थ होते हुए शर और धनुष धारण करते हो अब पाठक गण समझ लेंगे कि अर्हन् शब्द का अर्थ भाष्यकार ने योग्य ही किया है और व्याकरण शास्त्र में जिस धातु से यह शब्द बनता है। उसका योग्य ही अर्थ है संस्कृत व्याख्यान में अर्हन् शब्द का प्रयोग बार २ आता है तो क्या ये जैनी अपने अर्हन् व संस्कृत भाषण में आये हुये अर्हन् को एक मानते हैं तो जैसे किसी ने कहा है कि हे हलवाहक शूद्र अर्हन् "हलं सुचारु रूपेण प्रवर्तस्व" ऐसे वाक्य में हल जोतने के लिये जैनी अपने ईश्वर को शीघ्र क्यों नहीं भेजते क्योंकि वाक्य में तो अर्हन् शब्द आही गया है परंतु डोंगरे जी यदि ऐसा करेंगे तो इनका अर्हन् उसी दिन से मंदिर में रहने से इस्तीफा दे देगा। सोचेगा कि अर्हन् शब्द के अनेक प्रकार के अर्थ हैं तो हमारी दिनभर टनफार हुआ करेगी क्या डोंगरे जी तलवार से अपने मस्तक को काटते हुये क्यों आत्म-हत्या के कर्ता बनते हो तुमको दो में से एक करना होगा। अर्हन् का इस्तीफा मंजूर करो या वेद मन्त्र में आये हुये अर्हन् शब्द का योग्य अर्थ मानो नहीं तो तुम्हारा पीछा स्वसिद्धांत हानि रूप कर्ण पिशाचिनी न छोड़ेगी। ऐ अहिंसा के पुजारियो? तुम्हारा अर्हन् हाथ में धनुष वाण लिये किसको मारने के लिये खड़ा है। क्योंकि (अर्हन विभर्षि सायकानि धन्वार्हन्) इस वेद मन्त्र में अर्हन् का स्वरूप धनुष वाण लिये हुये है इसी प्रकार ऋ० वे० मं० १ सू० ९४.

इमंस्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव संमहे मा मनीषया।
भद्राहिनः प्रभृतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मारिषा मा वयं तव॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्हंतो येसुदानवो नरो असामिशवसः।
प्रयज्ञं यज्ञियेभ्यो दिवो अर्चामरुद्भ्यः॥

ऋ० वे० मं० ५ सू० ५२

इन दो मंत्रों में डोगरे जी ने महान् अनर्थ किया है पहिले के मंत्र में अग्नि की स्तुति है। दूसरे में वायु की स्तुति है। दोनों मंत्रों का वेदभाष्य इस प्रकार का है

हे अग्ने अर्हते पूज्याय जातवेदसे जातधनाय इत्यदि,

हे अग्ने हमारे तुम्हारे साथ मैत्री भाव होने से पूजने योग्य उत्पन्न जीवों के जानने वाले अग्नि तुम्हारे लिये कल्याण होवें। इस मंत्र में भी अर्हन् शब्द अग्नि का वाचक है। जैनियों के अर्हन् ऋषि का वाचक नहीं है इसी प्रकार

'अर्हंतो येसु दानवो नरो'

इस मंत्र में अर्हन शब्द वायु का वचक है जैसा कि वेद भाष्य नीचे लिखा जाता है।

हे होतः हे आत्मन् वा ये अर्हंतो पूज्याः सुदानवः शोभानदानाः नरः नेतारः कर्मणां असामिशवसः अनल्प बलाः सन्ति तेभ्यः यज्ञियेभ्यः यज्ञार्हेभ्यः दिवः द्योत मानेभ्यः मरुद्भयः दीप्तं यज्ञं हविः अर्चा प्रयच्छ इत्यर्थः

हे हवन करने वाले आत्मा पूजने योग्य मनोरथों को देन वाले नेता उत्तम कर्म में ले जाने वाले कर्मों से पूरे बली उस यज्ञ के भाग लेने वालों के लिये स्वर्ग से आये हुये पवनों के लिये यज्ञ करो।

इस वेद भाष्य में अर्हन् का अर्थ वायु होने से डोंगरे की धूर्तता का ता व जैनमत के नवीनपने का पता पाठक गणों को लग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जायगा। ऐ जैनियो तुम्हारे एक भी तीर्थंकर का नाम वेद मंत्र में नहीं है। इसके बाद और भी जो वेद मन्त्र लिखा है उनका भी यही हाल है। वेद मन्त्रों का अर्थ वेद भाष्यों द्वारा ही हो सकता है। डोंगरें की बुद्धि का वहाँ ठिकाना ही नहीं है।

ये जैनी जिस वेद शास्त्र की निन्दा किया है उसी को अपने मत के प्राचीनत्व में प्रमाण देते हैं--ठीक है—क्यों न दें—सब धर्मों का मूल कारण सनातन धर्म ही है—यह हम आगे कह आये हैं--इसी लिये सनातन हिन्दु धर्म—जगद्गुरू विश्व धर्म है—

४ मन्त्र वेद के और भी डोंगरे ने लिखा है सो कोई तो वेद में हैं ही नहीं—जो हैं भी उनका अर्थ दही वरा की तरह किया है। ज्ञानशत्रु नाथूराम डोंगरे की बुद्धि के नमूनारूप तीन मंत्र शुद्ध अर्थ पूर्वक लिखे गये हैं—जिससे डोंगरे की माया का पता विद्वज्जनों को लग जायगा। इसी प्रकार बाल्मीकीय रामायण का अशुद्ध मंत्र लिख कर अशुद्ध व्याख्या किया है। डोंगरें ने भागवत में भगवान ऋषभदेव जी को जैन धर्म का प्रवर्तक माना है। सो मिथ्या ही है। यह बात हम पूर्व ही स्पष्ट कह आये हैं। कि भागवत से जैनपन्थ नास्तिक ही सिद्ध हुआ है।

हिन्दू सनातनीय शास्त्रों में आये हुये जिन शब्द से जैनियों की प्राचीनता का खण्डन

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ २०७ में मल्ल का झूँठा माया जाल

मल्ल जी ने जैन मत की सिद्धि के लिये सनातन धर्म शास्त्रों में आये हुये जिन शब्द स उछल कूँद व्यर्थ मचाया है। मल्ल ने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विष्णु सहस्र नाम में जनेश्वरः, यह पाठ बदल कर, जिनेश्वरः, ऐसा कर दिया है अरे मल्ल जी ? क्या तुमने यही दैत्य माया जाल जन्म भर सीखा है । अब स्थाली पुलाक न्याय से शास्त्र में आये हुये जिन शब्द का बदलना सब जगह इसी प्रकार समझा जायगा मल्ल को सनातनीय सिद्धान्त कुछ भी नहीं मालूम हैं मल्ल जी सुनिये ।

न पठेत् यावनीं भाषां प्राणैः कंठगतै रपि ॥१॥
हस्तिना ताड्यमानोऽपिनगच्छेज्जैन मंदिरम् ।

अर्थ—हाथी से रगड़ा जा रहा हुआ भी हाथी चाहे खाले परन्तु जैन मन्दिर में न जाय । जो वेद शास्त्र जिस मजहब के मन्दिरों में जाना मरण से भी खराब कहते हैं वह वेद शास्त्र भला कैसे जैन मजहब की प्राचीनता कह सकते हैं परम वैद्यराज नारायण ने असाध्य रोग रूप दैत्य योनि में उन्मत्त राजसादि तप से ऐश्वर्य पा कर निरपराध देवताओं को हिंसादि कष्ट देते हुये तारकाक्षादि दैत्यों को अहिंसा रूप मधु के साथ वेद विरुद्ध संखिया हरताल रूप औषधी दे दैत्य योनि असाध्य रोग से मुक्त कर त्रिलोकी को आनन्द दिया । अब यह विचारने की बात है कि त्रिलोक विजयी असाध्य रोगी तारकाक्षादि सदृश दैत्य ही संखिया हरताल पचा सकते हैं । साधारण रोगी यदि हरताल खायें तो मर जायें, यदि भगवान् ने अपनी माया से जिन पुरुष रूप ही संख्या हरताल रूप जैन मत का उपदेश किया तो जिन दूषित न हुये । किन्तु जिन देव उपदिष्ट संख्या हरताल रूप दैत्यों के बध के लिये जैन मत ही दुष्ट हुआ । यद्यपि औषधी कोई भी हो दुष्ट नहीं होती तथापि जिस रोग में जो औषधी विष हो जाय वह औषधी दुष्ट ही समझी जायगी । वेद विरुद्ध जिन देव उपदिष्ट संखिया हरताल रूप जैन मत तारकाक्षादि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रिलोक विजयी दैत्यों के लिये ही फायदा वाला हुआ न कि उनके बाद अहिंसा मात्र की दिखावटी डींग मारने वालों को हुआ।

ये लोग संखिया जैन मत को पान कर मुक्त नहीं होते। नग्नादि भेष में व संखिया में दोष है। इसलिये वेद विरुद्ध नग्नादि धारण किये पास में हरताल लिये जिन स्वरूप की हिन्दू सनातन धर्मी उपासना नहीं करते। हिन्दू लोग वेद शास्त्र रूपी संजीवनी बूटी वाले अनादि अनन्त परब्रह्म नारायण की उपासना करते हैं। संजीवनी बूटी ऐसी है, कि कैसा भी रोगी खाय उसको फायदा ही करेगी।" इस पूर्वोक्त कथन से जैन मत की नास्तिकता व कलियुग में अढ़ाई हजार वर्ष से भारत में आना साबित हो गया। जैनियों ने अपने मत के प्राचीनत्व सिद्ध करने के लिये हिन्दू विश्व सनातन धर्म की शरणागति किया है। ऐ जैनियो ? तुमको धिक्कार है कि जिस सनातन धर्म की निन्दा किया उसी सनातन धर्म को अपने मत के प्राचीनत्व में प्रमाण देते हो। जिस पात्र में खा कर तंदुरुस्त हट्टे कट्टे बने हैं उसी में छेद करते हैं। टोडर मल्ल जी उद्धृत योग वाशिष्ठ के मन्त्र में ५ पाँच अशुद्धियाँ हैं।

नाऽहं रामो नमे वांछा भावेषुचनमेमनः।
शान्ति मास्थातुमिक्षामि स्वात्मन्येव जिनो यथा॥

योग वाशीष्ठ में शुद्ध श्लोक इस प्रकार है।

नाहं रामो नमे वांछा भावेषु न च मे मनः।
शान्त आसितु मिच्छामि स्वात्मनीव जिनो यथा॥

भगवान् के बैकुण्ठ के जाने के समय का श्लोक है। भगवान् अपने ब्रह्मस्व रूप का ध्यान करते हैं कि मैं दशरथ का पुत्र राम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं हूँ। संसारी पदार्थों में न मेरी इच्छा है व न मेरा मन है क्यों कि मैं सर्व वस्तु से परिपूर्ण हूँ। जिस प्रकार बुद्ध देव ने तारकाद्यादि दैत्यों को बध कर नारायण आत्मा में शान्त होंगे उसी प्रकार मैं भी अपने नारायण रूप में शान्त होना चाहता हूँ। यथार्थ इस अर्थ से मल्ल की उछल कूद खतम हो गई। प्राचीनता के बदले नवीनता व बौद्ध पंथ की शाखा जैन पंथ सिद्ध हुआ। योग वाशिष्ट के टीकाकार ने जिनका अर्थ बुद्ध किया है। अमर कोष में भी बुद्ध जिन पर्यायवाची शब्द हैं। शङ्कराचार्य जी ने बौद्धों को भारत से बिदा कर दिया। बचे खुचे हिन्दू भेष में बौद्धों ने प्राण बचा कर कुछ दिन बाद हिन्दू राज्य के संकुचित रहने पर कुछ बौद्ध की मिली बात प्रकाशित कर जैनपंथ में परिणत हुये बौद्ध जैन का अन्तर भी तीन चार सौ वर्ष का है। इसलिये दोनों मत प्रायः समान ही हैं दोनों मतों का समान भाव भागवत के स्कंध ७ अ० ३ श्लोक ८४ से निश्चय इस प्रकार है।

ततः कलौ सम्प्रवृत्ते सम्मोहाय सुर द्विषाम्। बुद्धो नाम्ना जिनसुतः कीकटेषु भविष्यति ॥१॥

अर्थ—कलियुग में देवताओं को निरपराध कष्ट देने वालों के मोहनार्थ कीकट देश में जिन पुत्र बुद्ध नाम से श्री विष्णु भगवान् अवतार लेंगे इसी प्रकार।

श्लोक

जैन मार्ग रतो जैनः। अर्हन्नित्यथ, बुद्ध माता जिनेश्वरी, वध्वा पद्मासनं, जैनं पाशुपतम्।

इत्यादि इन श्लोकों से भी कलियुग बौद्ध मत की शाखा मल्ल जी ने स्वयं सिद्ध किया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनुस्मृति के जो-जो श्लोक मल्ल जी ने अपने मत के प्रीचीनत्व में प्रमाण लिखा है उनका नाम निशान तक नहीं है, यह उनका माया जाल है।

मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ २०४ में जो एको रागिषु राजते इत्यादि श्लोक है वह भर्तृहर शतक का कहा गया है। सो मल्ल जी की तरह अर्थ शंकर जी में हिन्दू शास्त्रों से सर्वथा गलत है। क्योंकि जिन्होंने काम देवको दग्ध ही कर दिया है उनका रहस्य ऐसा सम्भव नहीं है सम्भव तो जैनियों के मुनियों को ही होता है। जिनके मन्दिरों में परिवार सहित कामदेव बैठा है। जिनका सिद्धान्त भी भर्तृहर शतक के विरुद्ध है यथा—

ऋषीणां दारान् रममाणानाम्।
तस्मै रामानुजार्य्याय नमः परमयोगिने।
यः श्रुतिस्मृतिसूत्राणामन्तर्ज्वर मशीशमत्॥

(अस्मद्गुरुभ्यो नमः)

इति श्री जैनि दण्डने पं० भागवताचार्य शास्त्रि कृतौ प्रथमोऽध्यायः—

(शुभं वोभूयात्)

विक्रम सं० १९९९ आषाढ़ कृष्ण ३० सोमवासर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुद्धि पत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ
धम	धर्म	४	क	के	६२
धर्म	धर्म	४	८८००	८८०००	२७
कर्त्तत्व	कर्तृत्व	१६	।जसके	जिसके	१६
५००००००	५०००००००	१७	वर्णाश्रम	व्रर्णाश्रम	
चूप	धूप	१७	धर्मों	धर्मों	६५
मूर्ति	मूर्ति	२२	धम	धर्म	६५
प्रहलाद	प्रह्लाद २६-	३२	।कस	किस	६६
दुर्भाग्य	दुर्भाग्य	३६	धम	धर्म	६७
प्राथना	प्रार्थना		हा	ही	६९
वष	वर्ष	४१	धम	धर्म	७१
हरी ॐ	हरिः ॐ	४१	सर्ग	विसर्ग	७२
दवि	देवि		स्वग	स्वर्ग	७६
में	मे		गइ	गई	८०
समावार	समाचार	४६	वोद्धो	वौद्धों	८०
देवा प्रिय	देवानां प्रिय	४६	सर्वहा	सर्वदा	१६
।जस	जिस	३६	दुव्यवहार	दुर्व्यहार	६४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi